ज्वाल की, भूचाल की साकार परिभाषा तुम्हीं हो,
देश की समृद्धि की सबसे प्रबल आशा तुम्हीं हो।
ठान लोगे तुम अगर, युग को नई तस्वीर दोगे,
गर्जना से, शत्रुओं के तुम कलेजे चीर दोगे।
दाँव पर गौरव लगे तो शीश दे देना विहँस कर–
देश के सम्मान पर
काली घटा छाने न देना।
देश की स्वाधीनता पर आँच तुम आने न देना।

वह जवानी, जो कि जीना और मरना जानती है,
गर्भ में ज्वालामुखी के जो उतरना जानती है।
बाहुओं के जोर से पर्वत जवानी ठेलती है,
मौत के हैं खेल जितने भी, जवानी खेलती है।
नाश को निर्माण के पथ पर जवानी मोड़ती है,
वह समय की हर शिला पर चिह्न अपने छोड़ती है।
देश का उत्थान तुमसे माँगता है नौजवानों!
दहकते बलिदान के अंगार
कजलाने न देना।
देश की स्वाधीनता पर आँच तुम आने न देना।

– श्रीकृष्ण सरल

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. पं. बालकृष्ण शर्मा नवीन ने कविता में किसका आह्वान किया है?
2. ''क्षणिक आतंक'' से क्या तात्पर्य है?
3. ''नींव के पत्थर'' से कवि का क्या तात्पर्य है?
4. किस धरोहर को हाथ से न जाने देने की बात कही गई है?
5. ''देश की समृद्धि की प्रबल आशा'' से क्या तात्पर्य है?

लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. कवि ने भारतीय स्वर्णिम इतिहास के किन अंशों का उल्लेख कर युवाओं को प्रेरित किया है?

2. भारतीय युवकों का क्रोध किस प्रकार का बताया गया है?

3. ''तुम चलाते हो सदा चिर चेतना के तीर'' – का आशय स्पष्ट कीजिए।

4. वतन के लाड़लों से क्या अपेक्षा की गई है ?

5. ''दाँव पर गौरव लगे तो शीश दे देना विहँस कर'' – पंक्ति से कवि ने क्या भाव व्यक्त किया है ?

6. ''समय की शिला पर चिह्न छोड़ने'' यह पंक्ति किस संदर्भ में कही गई है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

1. कवि नवीन ने भारतीय युवाओं को ''काल के भी काल'' क्यों कहा है?

2. ''औ, पधारेगा सृजन कर अग्नि में सुस्नान'' के द्वारा कवि के किस दृष्टिकोण का पता चलता है?

3. कवि सरल ने युवाओं का आह्वान किस हेतु किया है?

4. ''सिंह'' और ''स्यार'' किसे और किस संदर्भ में कहा है?

5. निम्नलिखित पद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए–

   (i) काल का तव धनुष ..... सृजन–नाश–हिलोर।

   (ii) यह निपट आतंक .....अभयता के स्रोत।

   (iii) तुम न समझो ..... पीकर ही खिली है।

   (iv) जो विरासत में मिला ..... खाने न देना।

6. ''श्रीकृष्ण सरल राष्ट्रीय विचारधारा के कवि हैं।'' संकलित कविता के आधार पर इस कथन की विवेचना कीजिए।

काव्य सौन्दर्य –

1. **निम्नलिखित शब्दों के विलोम शब्द लिखिए –**

   विजय, स्वाधीनता, सम्मान, निर्माण, देशद्रोही।

2. **दिए हुए शब्दों के दो-दो पर्यायवाची लिखिए –**

   पर्वत, खून, आग, बाग।

3. **अलंकार छाँटिए –**

   (क) क्या करेगा यह विचारा तनिक–सा अवरोध?

   (ख) अरे? तुम हो काल के भी काल।

   (ग) देश का कल्याण गहरी सिसकियाँ जब भर रहा हो।

समझिए-

ओज गुण

जहाँ कविता को पढ़कर ओज, जोश और उत्साह का भाव जाग्रत हो, वीर रस का संचार हो वहाँ ओज गुण होता है। ओज गुण की कविता में ट वर्ग की प्रमुखता होती है-

एक क्षण भी न सोचो कि तुम होगे नष्ट,
तुम अनश्वर हो! तुम्हारा भाग्य है सुस्पष्ट!

4. बालकृष्ण शर्मा नवीन के संकलित अंश में से ओज गुण की अन्य पंक्तियों को अर्थ के साथ उद्धृत कीजिए।

समझिए-

जागो फिर एक बार।
सिंही की गोद से
छीनता रे शिशु कौन?
मौन भी क्या रहती वह रहते प्राण?
रे अजान।

इस काव्यांश को पढ़कर वीर रस की निष्पत्ति होती है। वर्णन उत्साह पूर्ण है और राष्ट्रीयता से ओतप्रोत है। इसको पढ़कर हमारे चित्त में उत्साह स्थायी भाव आता है इसलिए इस काव्यांश में वीर रस दृष्टव्य है।

5. निम्नलिखित पंक्तियों में कौन सा रस है? पहचान कर लिखिए -

तुम प्रबल दिक्-काल-धनु-धारी सुधन्वा वीर
तुम चलाते हो सदा चिर चेतना के तीर!

और भी जानिए-

भयानक रस - जहाँ काव्य में भयानक दृश्यों, व्यक्तियों या वस्तुओं का वर्णन हो, वहाँ भयानक रस की निष्पत्ति होती है। इसका स्थायी भाव भय है।

उदाहरण-

जरह नगर भा लोग बिहाला।
झपट लपट बहु कोटि कराला।।
तातु-मातु हा सुनिअ पुकारा।
यहि अवसर को हमहिं उबारा।।

अद्‌भुत रस – जहाँ काव्य में अलौकिक या विचित्र वस्तुओं व्यक्तियों अथवा दृश्यों का वर्णन हो वहाँ अद्‌भुत रस की निष्पत्ति होती है। इसका स्थायी भाव विस्मय है।

उदाहरण – **केसव कहि न जाइ, का कहिए**

देखत तव रचना विचित्र अति, समुझि मनहिं मन रहिए।
सून्य भीति पर चित्र, रंग नहि, तनु बिनु लिखा चितैरे।
धोये मिटै न, मरै भीति, दुख पाइय इहि तनु हेरे।

योग्यता विस्तार–

(1) ओज गुण की कविता याद कीजिए और विद्यालय के सांस्कृतिक कार्यक्रम में ओजस्वी वाणी में सुनाइए।

(2) देशप्रेम पर आधरित एक लघु नाटिका बनाइए और राष्ट्रीय पर्व के अवसर पर उसका मंचन कीजिए।

(3) 'देश के सम्मान पर काली घटा छाने न देना''

इस विषय से संबंधित देश प्रेम पर आधारित रचनाओं का सृजन कीजिए।

शब्दार्थ

अरे तुम हो काल के भी काल –

काल = मृत्यु *विकराल* = भयंकर *भीति-ओत-प्रोत* = भय से आक्रांत (भय युक्त)

दिक्-काल-धनु-धारी-सुधन्वा = दिशा और काल रूपी धनुष को धारण करने वाला धनुर्धर

भूडोल = भूकम्प।

राष्ट्र के श्रृंगार –

सौरभ = सुगंध *भूचाल* = भूकंप

❋ ❋ ❋

सामाजिक समरसता

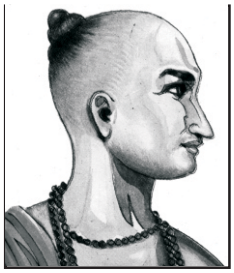

गोस्वामी तुलसीदास

कवि परिचय :

गोस्वामी तुलसीदास का जन्म संवत् 1589 के आसपास बाँदा जिले के राजापुर गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम आत्माराम तथा माता का नाम हुलसी था। स्वामी नरहरिदास के सान्निध्य में उन्होंने वेद-पुराण एवं अन्य शास्त्रों का अध्ययन किया। संवत् 1680 में उनका स्वर्गवास हो गया।

उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं- दोहावली, कवितावली, रामचरित मानस, विनय पत्रिका, रामाज्ञाप्रश्न, हनुमान बाहुक, रामलला नहछू, पार्वती मंगल, बरबै रामायण, वैराग्य संदीपनी तथा कृष्ण गीतावली। रामचरित मानस हिन्दी साहित्य का सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य है। सोहर छन्दों में लिखे हुए 'नहछू', 'जानकी मंगल' और 'पार्वतीमंगल' उनके खण्डकाव्य हैं। 'गीतावली', 'कृष्ण गीतावली', 'विनय पत्रिका' हिन्दी के सर्वोत्तम गीतिकाव्यों में से हैं। 'विनय पत्रिका' हिन्दी के विनयकाव्यों में अद्वितीय हैं। 'कवितावली' मुक्तक काव्य परंपरा की उत्कृष्ट रचना है।

तुलसी साहित्य में लोकहित, लोक मंगल की भावना सर्वत्र मुखर है। तुलसी ने अपने समय में प्रचलित अवधी और ब्रज भाषा को अपनाया। उनकी अवधी कोमल और सरस पदयुक्त है। यद्यपि उन्होंने संस्कृत शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग किया है तथापि कहीं भी वह बोझिल अथवा दुरुह नहीं हो पाई। ब्रज और अवधी दोनों भाषाओं का मधुर, सरस और प्रौढ़ रूप तुलसी के काव्य में सहज ही दृष्टव्य है।

भावों और रसों के संचार में तुलसी की प्रतिभा अनुपम है। अलंकारों के सहज प्रयोग और प्रस्फुटन से रचनाएँ प्रभावोत्पादक बन गई है। तुलसी साहित्य में नवों रसों का परिपाक् स्पष्ट है। छन्द योजना में तुलसी ने दोहा, चौपाई, कवित्त, सवैया आदि का सृजन किया है।

तुलसी के काव्य का बहि:पक्ष जितना सबल है, उनका अन्त:पक्ष उससे भी सबल है। वे मानवता के सर्वोच्च आचरणों की स्थापना करते हैं। इस संबंध में 'रामचरितमानस' उनकी अद्वितीय रचना है।

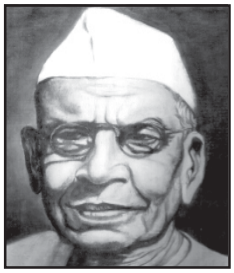

मैथिली शरण गुप्त

कवि परिचय :

अपने साहित्य से राष्ट्रीय चेतना जाग्रत करने वाले महान कवि श्री मैथिली शरण गुप्त का जन्म चिरगाँव जिला झाँसी में सन् 1886 में हुआ था। इनके पिता का नाम सेठ रामचरण गुप्त था। सन् 1964 में हिन्दी के इस महा कवि का स्वर्गवास हो गया।

भारत सरकार के पद्मभूषण अलंकार से सम्मानित गुप्तजी की रचनाओं को चार भागों में बाँटा जा सकता है-

1. महाकाव्य - साकेत 2. खण्डकाव्य - जयद्रथ-वध, पंचवटी, यशोधरा, नहुष, द्वापर
3. काव्य संग्रह - भारत-भारती, किसान, पृथ्वीपुत्र, प्रदक्षिणा, झंकार, गुरुकुल, वैतालिक
4. पद्य रूपक - अनघ, चन्द्रहास, तिलोत्तमा, क्षमा, मेघनाद-वध, स्वप्न वासवदत्ता

गुप्तजी ने अपने साहित्य से राष्ट्रीय चेतना जाग्रत की। गुप्तजी भारतवासियों में एकता स्थापित करने तथा सद्भाव, सौजन्य व सौहार्द्र विकसित करने के लिए आजीवन साहित्य रचना करते रहे। उनका काव्य रामभक्ति व राष्ट्र भक्ति का अनूठा संगम है।

राष्ट्र कवि ने खड़ी बोली में काव्य रचना की है। यमक, अनुप्रास, श्लेष, रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, विभावना, अपन्हुति आदि अलंकारों का प्रयोग आपके काव्य में हुआ है। रोला, छप्पय, सवैया, दोहा व हरिगीतिका छंद का उपयोग भी आपने किया है। आपकी भाषा परिमार्जित, व्याकरण सम्मत तथा प्रवाहमयी है। आपके काव्य में ओज, प्रसाद तथा माधुर्य की त्रिवेणी प्रवाहित है।

साकेत महाकाव्य पर आपको हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्रदान किया गया। अपने काव्य में शाश्वत मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा से ही वे राष्ट्र कवि के सम्मान से विभूषित किए गए।

केन्द्रीय भाव -

समाज की अवधारणा एक सम्पूर्ण इकाई के रूप में ही निर्धारित की गई है। किन्तु सामाजिक गतिशीलता के अन्तर्गत इस तरह के व्यतिक्रम भी आते हैं, जहाँ समाज अनेक अंतर्द्वन्द्वों से ग्रस्त होकर अपनी समरसता को समाप्त करने लगता है। समाज के चिंतक और साहित्यकार अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम से सदैव समाज के सामरस्य को सुरक्षित रखने का प्रबल उद्यम करते हैं। वह समाज जिसमें पारस्परिक प्रेम का विस्तार रहता है, उसमें मानवीय मूल्य चिरस्थायी व सुदृढ़ होते हैं। जिस समाज में संवेदनशीलता की व्यापकता जितनी अधिक होती है वह समाज उतना ही उदात्त, सुखी, और समृद्ध होता है। हमारा साहित्य इस चिंतन का सदैव पक्षधर रहा है।

भक्ति काल के कवियों में सामाजिक समरसता का स्वर पर्याप्त रूप से मुखरित हुआ है। उस युग के कवि का कथन था कि ''हरि को भजै सौ हरि का होई।'' प्राणी मात्र में परमात्मा को अनुभव करने वाला भक्ति साहित्य सामाजिक समरसता का उद्घोषक है। कविवर तुलसीदास ने केवट और राम के प्रसंग में इस तथ्य को संवेदना के स्तर पर उदात्त रूप में प्रकट किया है। अयोध्या के राजपुत्र राम केवट से जिस आत्मीय भाव से भेंट करते हैं वह एक भावुक दृश्य है। एक तरफ अपनी हीनता और दुर्बलता को प्रकट करने वाला केवट है, तो दूसरी ओर समदर्शी और प्राणीमात्र को अपना स्नेह प्रदान करने वाले राम हैं। केवट का भोलापन राम के हृदय को प्रसन्न करता है। वे भाव के पारखी हैं। इसलिए केवट से उनका प्रेम समरसता का संदेश प्रदान करता है।

आधुनिक युग में मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में सामाजिक समरसता के प्रसंग सर्वाधिक हैं। वे हमारे अतीत को अपनी कविता में उद्घाटित करते हुए स्पष्ट करते हैं कि हमारा अतीत पारस्परिक सद्भाव से ओतप्रोत था। हम मृत्यु में भी अमृत-तत्व के दर्शन करते हैं।

केवट प्रसंग

नाम अजामिल-से खल कोटि अपार नदीं भव बूड़त काढ़े।
जो सुमिरें गिरि मेरु सिलाकन होत, अजाखुर बारिधि बाढ़े।।
तुलसी जेहि के पदपंकज तें प्रगटी तटिनी, जो हरै अघ गाढ़े।
ते प्रभु या सरिता तरिबे कहुँ माँगत नाव करारें ह्वै ठाढ़े।।1।।

एहि घाटतें थोरिक दूरि अहै कटि लौं जलु, थाह देखाइहौं जू।
परसें पगधूरि तरै तरनी, घरनी घर क्यों समुझाइहौं जू।।
तुलसी अवलंबु न और कछू, लरिका केहि भाँति जिआइहौं जू।
बरु मारिए मोहि, बिना पग धोएँ हौं नाथ न नाव चढ़ाइहौं जू।।2।।

रावरे दोषु न पायन को, पगधूरिको भूरि प्रभाउ महा है।
पाहन तें बन-बाहनु काठको कोमल है, जलु खाइ रहा है।।
पावन पाय पखारि कै नाव चढ़ाइहौं, आयसु होत कहा है।
तुलसी सुनि केवट के बर बैन हँसे प्रभु जानकी ओर हहा है।।3।।

प्रभुरुख पाइ कै, बोलाइ बालक घरनिहि,
बंदि कै चरन चहूँ दिसि बैठे घेरि-घेरि।
छोटो-सो कठौता भरि आनि पानी गंगाजूको,
धोइ पाय पीअत पुनीत बारि फेरि-फेरि।।
तुलसी सराहैं ताको भागु, सानुराग सुर
बरषैं सुमन, जय-जय कहैं टेरि-टेरि।
बिबिध सनेह-सानी बानी असयानी सुनि,
हँसैं राघौ जानकी-लखन तन हेरि-हेरि।।4।।

- गोस्वामी तुलसीदास

महत्ता

जो पूर्व में हमको अशिक्षित या असभ्य बता रहे-
वे लोग या तो अज्ञ हैं या पक्षपात जता रहे।
यदि हम अशिक्षित थे, कहें तो सभ्य वे कैसे हुए?
वे आप ऐसे भी नहीं थे, आज हम जैसे हुए।।1।।

ज्यों ज्यों प्रचुर प्राचीनता की खोज बढ़ती जायगी,
त्यों त्यों हमारी उच्चता पर ओप चढ़ती जायगी,
जिस ओर देखेंगे हमारे चिह्न दर्शक पायेंगे,
हमको गया बतलायेंगे, जब जो जहाँ तक जायेंगे।।2।।

पाये हमीं से तो प्रथम सबने अखिल उपदेश हैं,
हमने उजड़कर भी बसाये दूसरे बहु देश हैं।
यद्यपि महाभारत-समर था मरण भारत के लिए,
यूनान जैसे देश फिर भी सभ्य हमने कर दिये।।3।।

हमने बिगड़कर भी बनाये जन्म के बिगड़े हुए,
मरते हुए भी हैं जगाये मृतक-तुल्य पड़े हुए।
गिरते हुए भी दूसरों को हम चढ़ाते ही रहे,
घटते हुए भी दूसरों को हम बढ़ाते ही रहे।।4।।

कल जो हमारी सभ्यता पर थे हँसे अज्ञान से-
वे आज लज्जित हो रहे हैं अधिक अनुसन्धान से।
जो आज प्रेमी हैं हमारे भक्त कल होंगे वही,
जो आज व्यर्थ विरक्त हैं अनुरक्त कल होंगे वही।।5।।

सब देश विद्या-प्राप्ति को सतत यहाँ आते रहे,
सुरलोक में भी गीत ऐसे देव-गण गाते रहे-
''हैं धन्य भारतवर्षवासी धन्य भारतवर्ष है,
सुरलोक से भी सर्वथा उसका अधिक उत्कर्ष है''।।6।।

- मैथिलीशरण गुप्त

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. केवट के अनुसार ''पगधूरि'' का क्या प्रभाव है?
2. केवट की जीविका का एक मात्र आधार क्या था?
3. कवि के अनुसार हमें अशिक्षित या असभ्य बताने वाले लोग कौन हैं?
4. सभी देश हमारे यहाँ किस प्रयोजन से आते रहे हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. केवट के किन वचनों को सुनकर प्रभु को हँसी आ गई ?
2. प्राचीनता की खोज बढ़ने पर हम पर क्या प्रभाव पड़ेगा?
3. भारत की सभ्यता के विकास को कौन लोग स्वीकार नहीं करते और क्यों?
4. सुरलोक में देवगण किसका वंदन कर रहे हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. राम को पार उतारने के लिए केवट कौन-सी शर्त रखता है और क्यों?
2. रामचंद्रजी का भाव समझकर केवट ने क्या-क्या उपक्रम किए?

3. ''हमको अशिक्षित कहने वाले लोग सभ्य कैसे हो सकते हैं?'' इन पंक्तियों से कवि का क्या तात्पर्य है?

4. 'महत्ता' कविता में भारतवर्ष की किन-किन विशेषताओं का उल्लेख किया गया है ?

काव्य-सौन्दर्य

1. निम्नलिखित शब्दों के विलोम शब्द लिखिए-

अनुरक्त, उत्कर्ष, अज्ञ, मरण

2. निम्नलिखित शब्दों के मानक रूप लिखिए-

धूरि, लरिका, पायन, प्रभाउ, आयसु, बानी

3. तुलसीदास किस भाषा के कवि हैं? उनकी भाषा के कुछ शब्द पाठ से छाँट कर लिखिए।

4. निम्नलिखित पंक्तियों में आए अलंकार छाँटकर लिखिए-

- बरषै सुमन, जय-जय कहैं टेरि-टेरि
- पावन पाय पखारि कै नाव चढ़ाइहौं।
- ज्यों ज्यों प्रचुर प्राचीनता की खोज बढ़ती जायगी।

अंतर्कथा-

अजामिल - एक डाकू था। नारदजी के उपदेश से उसे स्वयं के द्वारा किए गए पापकर्मों का बोध हुआ। उसने नारद के कहने पर अपने पुत्र का नाम 'नारायण' रखा। मरणासन्न अवस्था में उसके द्वारा अपने पुत्र का नाम 'नारायण' बारम्बार पुकारे जाने पर अंतिम समय में वह मोक्ष को प्राप्त हुआ।

केवट-

एक मल्लाह - जिसने राम को गंगा के पार उतारा था। राम के प्रति अनन्य भक्ति के कारण उसने राम के चरण रज धोकर जलपान किया।

ध्यान दीजिए -

''रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्'' अर्थात् रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाले शब्द को काव्य कहते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार ''जो उक्ति हृदय में कोई भाव जाग्रत कर दे या उसे प्रस्तुत वस्तु या तथ्य की मार्मिक भावना में लीन कर दे, उसे काव्य कहते हैं।'' काव्य के भेद निम्नलिखित हैं- श्रव्य काव्य तथा दृश्य काव्य।

श्रव्य काव्य - जिस रचना का रसास्वादन सुनकर या पढ़कर किया जा सके, उसे 'श्रव्य काव्य' कहते हैं **जैसे**- गोस्वामी तुलसीदास रचित 'रामचरित मानस'।

दृश्य काव्य - जिस रचना का रसास्वादन देखकर, सुनकर या पढ़कर किया जा सके, उसे 'दृश्य काव्य' कहते हैं। **जैसे** - जयशंकर प्रसाद लिखित 'स्कंदगुप्त' नाटक।

श्रव्य काव्य के दो भेद होते हैं- प्रबंध काव्य और मुक्तक काव्य।

प्रबंध काव्य –

प्रबंध काव्य के छंद एक कथा के धागे में माला की तरह गुँथे होते हैं, अर्थात् जो रचना कथा-सूत्रों या छंदों की तारतम्यता में अच्छी तरह निबद्ध हो उसे प्रबंध काव्य कहते हैं। जैसे – साकेत, रामचरित मानस।

मुक्तक काव्य –

मुक्तक काव्य ऐसी रचना को कहते हैं जिसमें कथा नहीं होती तथा जिसके छंद अर्थ की दृष्टि से पूर्वापर के प्रसंगों से मुक्त होते हैं। जैसे- मधुशाला, बिहारी सतसई।

2. प्रबंध काव्य से आप क्या समझते हैं? किन्हीं दो प्रबंध काव्यों के नाम लिखिए।

और भी समझिए –

दृश्य काव्य के दो भेद होते हैं-

(1) नाटक (2) एकांकी

नाटक – इसमें अभिनय तत्व की प्रधानता रहती है। इसमें मानवीय जीवन के क्रियाशील कार्यों का अनुकरण होता है। इसमें कई अंक होते हैं।

एकांकी – एकांकी एक अंक वाला दृश्य काव्य है। यह एक ऐसी रचना है जिसमें मानव जीवन के किसी एक पक्ष, एक चरित्र, एक समस्या और एक भाव की अभिव्यक्ति होती है।

प्र. 5 नाटक और एकांकी में अंतर बताइए।

योग्यता विस्तार :-

1. कवितावली, और गीतावली में भी केवट-प्रसंग हैं- उन्हें छाँटकर पढ़िए।
2. आजकल स्वचालित बोटों पर सैर की जाती है, नाव और डोंगी पर अभिभावकों अथवा शिक्षकों के साथ स्वयं पतवार चलाकर देखिए एवं केवट के श्रम और कला का अनुभव कीजिए।
3. प्राचीन शिक्षा केन्द्र तक्षशिला और नालन्दा विश्वविद्यालय कहाँ थे? पता लगाएँ। संभव हो तो किसी एक स्थान की यात्रा करें।
4. शिक्षक की सहायता से पाठ में आए पौराणिक चरित्रों को विस्तार से जानिए। और कक्षा में चर्चा कीजिए।

शब्दार्थ

केवट प्रसंग

खल = दुष्ट, दुर्जन, *अजाखुर* = बकरी का खुर, *वारिधि* = समुद्र, *अघ गाढ़े* = बहुत बड़े पाप, *कटिलौं* = कमर तक, *परसें* = स्पर्श से, *तरै तरनि* = नाव के स्वरूप में बदलाव, *रावरे* = आपके, *काठ* = लकड़ी *आयसु* = आज्ञा, *कठौता* = काठ का बर्तन, *सनेहसानी* = स्नेह सिक्त, *असयानी* = सहज, चालाकी रहित।

महत्ता-

ओप = चमक, *अखिल* = संपूर्ण, *समर* = युद्ध, *उत्कर्ष* = उन्नति।

❋ ❋ ❋

जीवन-दर्शन

शिवमंगल सिंह
'सुमन'

कवि परिचय :

शिवमंगल सिंह 'सुमन' का जन्म उन्नाव (उत्तर प्रदेश) के झगरपुर नामक गाँव में सन् 1915 ई. में हुआ था। इन्होंने ग्वालियर के विक्टोरिया कॉलेज से बी.ए. किया। 1940 में एम.ए. और डी. लिट् की उपाधियाँ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त की। इनकी नियुक्ति नेपाल स्थित दूतावास में सांस्कृतिक सहायक के रूप में हुई। 1961 में माधव कॉलेज, उज्जैन के प्राचार्य नियुक्त हुए तथा कुछ वर्षों के बाद इन्होंने विक्रम विश्व विद्यालय, उज्जैन में उपकुलपति के रूप में कार्यभार संभाल लिया। इस पद से अवकाश लेकर साहित्य सेवा में रत रहते हुए सन् 2002 में आपका निधन हो गया।

'हिल्लोल', 'जीवन के गान', 'प्रलय सृजन', 'मिट्टी की बारात', 'विंध्य हिमालय', 'पर आँखें नहीं भरीं', 'विश्वास बढ़ता ही गया' सुमन जी की प्रसिद्ध काव्यकृतियाँ हैं।

सुमन जी की कविता सामाजिक जीवन तथा राष्ट्रीय चेतना से जुड़ी हुई है। वे आस्था तथा विश्वास के कवि हैं। इस दृष्टि से 'वरदान माँगूगा नही' तथा 'तूफानों की ओर घुमा दो नाविक निज पतवार' आदि ओजस्वी रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। वे वर्गहीन समाज की कामना करते हैं।

सुमन जी की शैली में उनके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। उनकी शैली में सरलता, स्वाभाविकता है। शब्द चयन, कल्पना तथा भाव सौंदर्य की दृष्टि से उनकी भाषा समर्थ और सशक्त कही जा सकती है। शैली माधुर्य, प्रसाद और ओज गुणों से सम्पन्न है। सुमन जी सरल एवं व्यावहारिक भाषा के पक्षपाती हैं। इनकी खड़ी बोली में संस्कृत के तत्सम् शब्दों के साथ कहीं-कहीं उर्दू के शब्द भी दिखाई देते हैं।

इनकी भाषा की सरलता और प्रवाह पाठक की अनुभूति से शीघ्रतापूर्वक तादात्म्य स्थापित कर लेता है।

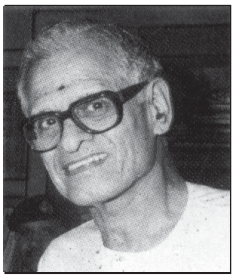

विष्णुकांत शास्त्री

कवि परिचय :

आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री का जन्म 2 मई 1929 को कोलकाता में हुआ। एम.ए., एल.एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त शास्त्रीजी 1953 से 1994 तक कोलकाता विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक रहे। अवकाश प्राप्त करने के पश्चात् वे भारत भवन भोपाल में न्यासी सचिव के पद पर रहे तथा उत्तरप्रदेश के राज्यपाल पद को भी आपने सुशोभित किया।

'कवि निराला की वेदना तथा अन्य निबंध', 'कुछ चन्दन की कुछ कपूर की', 'चिन्तन मुद्रा', 'अनुचिंतन' आदि उनके द्वारा रचित साहित्यिक समीक्षाएँ हैं। 'बांग्लादेश के संदर्भ में' (रिपोर्ताज) 'भक्ति और शरणागति', 'सुधियाँ उस चंदन के वन की' (संस्मरण) 'उपमा कालिदासस्य' (बांग्ला से हिन्दी में अनूदित) 'महात्मा गांधी का समाज दर्शन' (अंग्रेजी से हिन्दी में अनूदित) ग्रंथ हैं। 'दर्शक और आज का हिन्दी रंगमंच', 'बालमुकुंद गुप्त: एक मूल्यांकन', 'बांग्लादेश संस्कृति और साहित्य', 'तुलसीदास आज के संदर्भ में' आपके द्वारा संपादित ग्रंथ हैं। 'जीवन पथ पर चलते-चलते' उनका काव्य संकलन है।

डॉ. शास्त्री द्वारा लिखी गई कविताएँ जीवन के संवेदनशील क्षणों की भावना प्रधान अभिव्यक्ति हैं। 1955-56 तक प्राय: साहित्यिक गोष्ठियों में वे अपनी कविताएँ सुनाया करते थे। उन्होंने प्रयासपूर्वक बहुत कम कविताएँ लिखीं। जीवन में जैसे-जैसे मोड़ आते गए कविता उन्ही के अनुरूप मुखरित होती गई। भावों के आधार पर उनकी कविताओं को राष्ट्रीय, विविधा, प्रेरणा व प्यार, भक्ति एवं काव्यानुवाद के रूप में विभाजित किया जा सकता है।

शास्त्रीजी की भाषा ओजस्वी है। तत्सम शब्दों की बहुलता है। वीर रस की कविताओं में ओज गुण प्रधान शब्दावली का प्रयोग है तथा शांत रस की कविताओं में माधुर्य एवं प्रसाद गुणों का सहज समावेश है। अलंकार काव्य में स्वयं प्रवेशित हो गए हैं। रूपक, उपमा व अनुप्रास की छटा स्थान-स्थान पर सहज ही परिलक्षित होती है।

शास्त्रीजी को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल सम्मान, साहित्य भूषण सम्मान डॉ. राम मनोहर लोहिया सम्मान, तथा राजर्षि टंडन हिन्दी सेवी सम्मान प्राप्त हुए।

केन्द्रीय भाव :

जीवन के अनेक अनुभवों और विचारों से ही काव्य की अंतर्वस्तु का गठन होता है। ये अनुभव और विचार जीवन की व्यापकता तथा जीवन के बहुआयामी पक्ष की व्याख्या करते हैं। जीवन की कोई निरपेक्ष धारणा नहीं होती। वह निरंतर सापेक्षता में विकसित होता है। प्रकृति, समाज, संस्कृति इन सबके भीतर और इन सबके साथ ही जीवन अग्रगामी होता है। जीवन-दर्शन के अधिकांश आशय भी इनकी पृष्ठभूमि से ही निर्मित होते हैं। इसलिये जीवन दर्शन के अन्तर्गत जीवन के भौतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की प्रतिष्ठा होती है। भौतिक मूल्यों के अन्तर्गत सफल जीवन के सूत्र-पुरुषार्थ एवं कर्म-चेतना से ही फूटते हैं। इसलिये जीवन में प्रेम, उल्लास, उत्साह, उमंग आदि का स्थान है। इसके विपरीत विषाद और दुःख भी जीवन के लिये मूल्यवान है, क्योंकि दुःख के अँधेरे के भीतर ही सुबह का सूर्य फूटता है। 'वेदना-भाव' इसीलिये साहित्य में अपनी गहन पहचान बनाए हुए है। दुःख और सुख जीवन-सरिता के ये दो किनारे हैं इन किनारों के बीच बहती विभिन्न धाराएँ ही जीवन-दर्शन के भाव-बोध को व्यक्त करती हैं। आध्यात्म के अन्तर्गत रहस्य और दर्शन के आलोक को भी जीवन-दर्शन में समाहित किया जा सकता है। जीवन दर्शन का एक व्यापक बोध है - जीवन-दर्शन के अन्तर्गत उन समस्त कविताओं को ग्रहण किया जा सकता है - जो जीवनानुभूतियों और विचारों के प्रकाशमान कणों को अपनी अंजुरी में समेटे हुए हैं। काव्य का सम्पूर्ण इतिहास जीवन-दर्शन से परिपूर्ण है।

शिवमंगल सिंह सुमन का काव्य जीवन के बहुविध क्षेत्रों को प्रकट करता है। वे जीवन के संघर्ष और प्रेम दोनों के कवि हैं। संघर्ष और प्रेम उनके काव्य में सतत और साथ-साथ हैं। संकलित कविता में वे जीवन और फूल को एक समान स्वीकार करते हैं। जीवन जैसे एक फूल ही है, सौन्दर्य और सुगंध को बिखेरता हुआ। मालिन को सम्बोधित करते हुए वे कहते हैं कि फूल-फूल से वह रस लेती है, वैसे ही कवि-चेतना जन-जन के प्रेम के मधु को एकत्रित करती है। यही चेतना प्रिया बन कर जीवन को विस्तारमय प्रसन्नता भी देती है, और कभी जीवन में विषण्णता भी लाती है। कवि का स्वर आशावादी है, इसीलिए वह जीवन के आनंद को शाश्वत बनाने की कामना करता है।

आचार्य विष्णुकान्त शास्त्रीजी की कविता का फलक विस्तृत है। उनकी रचनाओं में राष्ट्रीयता जाग्रत करने की ललक है। संकलित कविता में कवि युवकों को विजय के आत्मबल से पूरित कर देना चाहते हैं। उनका मूल मन्त्र है कि विजय उन्हें ही मिलती है जिन्हें विजय का विश्वास होता है। विजय का यही विश्वास जीवन दर्शन बनकर बिगड़ी परिस्थितियों को बदलने की सामर्थ्य रखता है। नाश की भूमि पर नव निर्माण की गाथा लिखने का साहस भी नवयुवक के बढ़ते कदमों में है। वे स्वयं कभी कदम आगे बढ़ाकर पीछे नहीं रखते और यदि वे ऐसा सोचते भी हैं तो कवि उन्हें शपथ दिलाता है कि वे आगे बढ़कर पीछे न हटें।

कविता की यही प्रेरणा शास्त्रीजी की शक्ति है उनकी ऊर्जा है।

देखो मालिन, मुझे न तोड़ो

हम तुम बहुत पुराने साथी
जगती के मधुबन में
दोनों तन-मन से कोमल हैं,
फूल रहे गृह, बन में
हम उपवन का, तुम जन-मन का मधु, कण-कण कर जोड़ो,
देखो मालिन, मुझे न तोड़ो।

हम तुम दोनों में यौवन है
दोनों में आकर्षण
दोनों कल मुरझा जाएँगे
कर क्षण-भर मधुवर्षण
आओ, क्षण-भर हँस खिल मिल लें, कल की कल पर छोड़ो,
देखो मालिन, मुझे न तोड़ो।

जब जग मुझे तोड़ने आता
मैं हँस-हँस रो देता
जब तुम मुझ पर हाथ उठाती
मैं सुधि-बुधि खो देता
हृदय तुम्हारा-सा ही मेरा इसको यों न मरोड़ो,
देखो मालिन, मुझे न तोड़ो।

– शिवमंगल सिंह 'सुमन'

बढ़ सिपाही

विजय पथ पर बढ़ सिपाही
विजय है तेरी सुनिश्चित।

लोटती है विजय चरणों पर उन्हीं के, जो बढ़े हैं
तुच्छ कर सब आपदाएँ, धर्मपथ पर जो अड़े हैं।
विश्व झुकता है उन्हीं के सामने जो हैं झुकाते

बदल कर बिगड़ी परिस्थिति, हो अभय जय-गीत गाते॥
बढ़ सँभल कर, बन उन्हीं सा, प्राप्त कर तू फल अभीप्सित।
विजय है तेरी सुनिश्चित

दे रहे आह्वान तुझको मत्त होकर मेघ काले
उठ रही झंझा प्रबलतम जोर इनका आजमा ले।
शपथ तुझको जो हटाया एक पग भी आज पीछे
प्राण में भर अटल साहस खेल लें, इनको खिला ले॥
नाश की पटभूमिका पर, सृष्टि का कर चित्र अंकित।
विजय है तेरी सुनिश्चित।

छोड़ देंगी मार्ग तेरा विघ्न बाधाएँ सहम कर
काल अभिनंदन करेगा आज तेरा समय सादर।
गगन गायेगा गरजकर गर्व से तेरी कहानी
वक्ष पर पदचिह्न लेगी धन्य हो धरती पुरानी॥
कर रहा तू गौरवोज्ज्वल त्यागमय इतिहास निर्मित
विजय है तेरी सुनिश्चित।

– विष्णुकांत शास्त्री

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. 'जगती के मधुबन' में पुराने साथी कौन-कौन हैं ?
2. 'फूल और मालिन' दोनों कब मुरझा जाएँगे ?
3. 'विघ्न बाधाएँ' कब मार्ग छोड़ती हैं ?
4. 'बन उन्हीं सा' पंक्ति के माध्यम से कवि किसके समान बनने की बात कह रहा है ?
5. कवि किस बात की शपथ लेने की याद दिलाता है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. ''हृदय तुम्हारा सा ही मेरा, इसको यों न मरोड़ो'' – इस पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।
2. फूल मालिन से, न तोड़ने की प्रार्थना क्यों कर रहा है ?
3. 'पुरानी धरती' से कवि का क्या आशय है ?

4. 'त्यागमय इतिहास' कहकर कवि क्या भाव व्यक्त करना चाहता है ?

5. विजय कब सुनिश्चित होती है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. संकलित कविता के आधार पर सुमन जी के दार्शनिक विचार लिखिए।

2. फूल और मालिन दोनों के सन्दर्भ में मधुवर्षण का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

3. विजय किनके चरणों में लोटती है और क्यों ?

4. विश्व कब झुकता है ? उसे झुकाने की सामर्थ्य किसमें है ?

5. 'सृष्टि का चित्र नाश की पटभूमिका पर' अंकित करने की बात कवि क्यों कह रहा है?

6. निम्नलिखित पद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -

   - हम तुम बहुत पुराने साथी ..... कण-कण कर जोड़ो।
   - जब जग मुझे तोड़ने ..... मुझे न तोड़ो।
   - लौटती है विजय ..... तेरी सुनिश्चित।
   - छोड़ देंगी मार्ग ..... तेरी सुनिश्चित।

7. फूल और मालिन की किन समानताओं की ओर कवि ने संकेत किया है ?

काव्य सौन्दर्य -

1. निम्नलिखित शब्दों में से तत्सम तथा तद्भव शब्दों की पृथक-पृथक सूची बनाइए-

सृष्टि, गर्व, तुच्छ, पट, उज्ज्वल, बादल, फूल, मधु, पुराना, पीछे

2. निम्नलिखित पंक्तियों में काव्य-गुण पहचान कर लिखिए -

1. ''दोनों तन-मन से कोमल हैं, फूल रहे गृह, वन में''
2. ''प्राण में भर अटल साहस खेल ले, इनको खिला ले''

3. निम्नलिखित पंक्तियों में कौन-सा रस प्रधान है पहचान कर लिखिए -

''जब जग मुझे तोड़ने आता, मैं हँस-हँस रो देता,
जब तुम मुझ पर हाथ उठाती, मैं सुधि बुधि खो देता,
हृदय तुम्हारा सा ही मेरा, इसको यों न मरोड़ो।''

4. निम्मलिखित शब्दों के विलोम शब्द लिखिए -

निश्चित, आदर, आकर्षण, कोमल, साहस, यौवन, मुरझाना

5. पाठ में आए पुनरुक्त प्रकाश के उदाहरण छाँटकर लिखिए।

6. **निम्नलिखित पंक्तियों का भाव सौंदर्य स्पष्ट कीजिए -**

क. ''गगन गायेगा गरजकर गर्व से तेरी कहानी''

ख. ''काल अभिनंदन करेगा आज तेरा समय सादर।''

समझिए-

''मैं महावीर हूँ पापड़ को तोड़ सकता हूँ
गुस्सा आ जाए तो, कागज को मरोड़ सकता हूँ।''

इन पंक्तियों को पढ़ने से हास्य का भाव उत्पन्न होता है। जब 'हास' नामक स्थायी भाव का विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से संयोग होता है, तब हास्य रस की निष्पत्ति होती है। ये भाव किसी की अटपटी बातें सुनकर, विचित्र वेशभूषा देखकर भी उत्पन्न हो सकते हैं।

योग्यता विस्तार

1. माली और फूल के संवाद वाले दोहे एवं छन्द अन्य साहित्यिक पुस्तकों में से छाँटकर लिखिए।
2. क्षेत्रीय बोली की कोई कविता ढूँढ़िए एवं खड़ी बोली में उसका अनुवाद कीजिए।
3. मध्यप्रदेश से प्रकाशित होने वाली हिंदी भाषा की पत्र-पत्रिकाओं की जानकारी एकत्र कीजिए एवं जीवन-दर्शन पर आधारित कविताओं का संकलन कीजिए।

शब्दार्थ

देखो मालिन मुझे न तोड़ो -

जगती = संसार, *मधुवर्षण* = शहद बरसना, *सुधि-बुधि* = होश-हवास

बढ़ सिपाही

पथ = मार्ग, रास्ता, *आपदा* = विपत्ति, कठिनाई, *अभिप्सित* = इच्छित, *अभिनंदन* = स्वागत, अभिवादन

❋ ❋ ❋

विविधा-1

सूर्यकान्त त्रिपाठी
'निराला'

कवि परिचय :

छायावाद के प्रमुख स्तंभ और आधुनिक काव्य में क्रान्ति के अग्रदूत कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी का जन्म संवत् 1955 (सन् 1897) में हुआ इनके पिता श्री रामसहाय त्रिपाठी महिषादल राज्य के कर्मचारी थे। अतएव निराला का बचपन बंगाल की शस्य-श्यामला धरती पर बीता। वे संगीत के प्रेमी थे। जीविकोपार्जन के लिए उन्होंने रामकृष्ण आश्रम में रहकर 'समन्वय' का संपादन किया। 'मतवाला' और 'सुधा' का संपादन भी किया। आर्थिक विपन्नता और असाध्य रोगों से जूझते हुए 15 अक्टूबर 1961 को उनका स्वर्गवास हुआ।

निराला ने उपन्यास, कहानियाँ, आलोचना, जीवनी, निबन्ध तथा रेखाचित्र रचे और अनुवाद भी किए। 'राम की शक्ति पूजा', 'तुलसीदास' उनकी ओजस्वी भाषा संरचना के उदाहरण हैं तो उनमें महाकाव्यीय चेतना की संभावना भी प्रकट करते हैं। 'मिर्जा राजा जयसिंह के नाम शिवाजी का पत्र' हिन्दी साहित्य में काव्य वक्तृत्वकला का विरला उदाहरण है जो प्रतिपक्ष को आत्मसाक्षात्कार, शोध और परिष्कार के लिए विवश करता है। 'अनामिका', 'परिमल', 'गीतिका', 'कुकुरमुत्ता', 'अणिमा', 'नए पत्ते', 'आराधना', 'अर्चना' आदि मुक्तक गीत काव्य हैं। 'सरोज स्मृति' हिन्दी साहित्य में शोकगीत की अमूल्य निधि है।

निराला का काव्य दार्शनिक विचारधारा, गंभीर चिन्तन और भाव-सौन्दर्य की अमूल्य निधि है। विवेकानन्द का प्रभाव उन पर सुस्पष्ट है। उनके गीतों में प्रतीकात्मकता, संक्षिप्तता और संगीतात्मकता की प्रमुखता है। उनके काव्य में कहीं विराट की ओर रहस्यात्मक संकेत है तो कहीं सामान्य जन के उत्पीड़न के चित्र हैं, कहीं कथा मुखर है तो कहीं गीत माधुरी।

निराला ने जन-जीवन से, दर्शन से, इतिहास और पुराण, हर जगह से शब्द लेकर भाषा को पुष्ट किया है। भाव के अनुरूप भाषा का सृजन और प्रवाह का अभिनिवेश निराला का अपना निजी वैशिष्ट्य है। रूपकों की छटा और अनुप्रासों का प्रबंधन निराला में निराला है। हिन्दी साहित्य में निराला के कृतित्व को उनके व्यक्तित्व ने और भी अधिक महनीय और जाज्वल्यमान बनाया है।

कवि परिचय :

गजानन माधव मुक्तिबोध

नई कविता के सशक्त हस्ताक्षर एवं उसको नया मोड़ देने वाले मुक्तिबोध का जन्म 13 अक्टूबर सन् 1917 को श्योपुर में हुआ था। इन्होंने उज्जैन तथा इन्दौर में शिक्षा प्राप्त की। आर्थिक विषमताओं के कारण इनका अध्ययन बीच में ही रुक गया। दुर्भाग्य से सरस्वती का वरद् पुत्र सन् 1964 में ही काल के गाल में समा गया।

इन्होंने पद्य और गद्य साहित्य दोनों में रचनाएँ की थीं। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', तार सप्तक में छपने वाली कविताएँ, 'काठ का सपना', 'सतह से उठता हुआ आदमी', इनके महत्वपूर्ण काव्य संग्रह हैं। 'नए साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र', 'भारतीय इतिहास', 'कामायनी - एक पुनर्विचार', 'संस्कृति एवं नई कविता का आत्म संघर्ष' इनकी जानी मानी गद्य रचनाएँ हैं।

मुक्तिबोध की कविताओं का भाव पक्ष उन्नत तथा सम सामयिक है। समस्त परिवेश में कुछ पाने की ललक और जीवन के दल-दल में फँसे मानव को बाहर लाने का उन्होंने सदैव प्रयास किया है। इनकी भाषा परिमार्जित, प्रौढ़ तथा सबल है। सामान्य बोलचाल की भाषा के अतिरिक्त संस्कृत निष्ठ सामासिक पदावली से युक्त उनकी भाषा सरल एवं प्रवाहमय है। उनकी शैली प्रतीक एवं बिम्बों से अलंकृत है। बिम्ब सर्वथा मौलिक तथा नूतन ही प्रयोग किए हैं। मुक्तिबोध की काव्य शैली को अनगिनत काव्य शैलियों के मध्य सहज ही पहचाना जा सकता है।

मुक्तिबोध की अनुभूति अत्यन्त गंभीर तथा मार्मिक है। कल्पना में प्रसूनों की महक है जो भावना सागर की लहरों को मोहित करने वाली है। गजानन माधव मुक्तिबोध नई कविता के प्रतिनिधि कवि हैं और जीवनमूल्यों के प्रयोगधर्मी कवि भी हैं। नई कविता को स्वरुप प्रदान करने में उनका विशिष्ट स्थान है।

केन्द्रीय भाव :

काव्य में जीवन के अनेक रंग प्रकट होते हैं। इन रंगों को किसी विशिष्ट स्तम्भ में नहीं समेटा जा सकता है, इन्हें रूपों में ही अनुभव किया जा सकता है। इन्हें समग्र भाव से ग्रहण करने पर ही हम जीवन की समग्रता का अनुभव कर सकते हैं। विविधा एक तरह से काव्य के उपवन का गुलदस्ता है। अनेक फूलों को चयन करके एक जगह संकलित करके, उनके रूप, रंगत और उनकी अनेक तरह की सुगंध के समवेत प्रभाव को अनुभव कर हम जीवन-वैविध्य से परिचित हो सकते हैं। विविधा के अंतर्गत आधुनिक काल के कवियों की कविताओं के सौन्दर्य से परिचित हुआ जा सकता है। आधुनिक कवियों की प्रकृति-परकता, उनकी राष्ट्रीय चेतना और उनकी दार्शनिक दृष्टियों का समन्वय, विविधा के गवाक्षों से व्यक्त हो रहा है।

निराला छायावाद के श्रेष्ठ कवि हैं। उनकी कविता में समाज, संस्कृति, प्रकृति, अध्यात्म, व्यंग्य आदि भावों का समावेश है। निराला के काव्य में आवेग है, विद्रोह है, आत्म-विश्वास की दृढ़ता है। वे निर्भीक कवि हैं। उनकी कविता में क्रांति चेतना की अग्निधर्मा ज्वाल है, तो माधुर्य की मसृण भाव-धारा भी है। वे ऋतु-चित्रण के महत्वपूर्ण कवि हैं। बसंत वर्णन में तो वे सिद्धहस्त हैं। उनकी ऋतुपरक कविताओं में बसंत के लिये सर्वाधिक स्थान है।

प्रस्तुत कविताओं में बसंत प्रसन्नता और उत्कर्ष का भाव लेकर आता है। यह मिलन की ऋतु है, रस-रंग का काल है। बसंत यौवन की तरह सर्वत्र फैल रहा है। खेतों में इस समय पीताभ फसलें लहरा रही हैं। जीवन का उल्लास और प्रकृति का सौन्दर्य दोनों इस कविता में एक साथ प्रस्फुटित हो रहे हैं। पतझड़ में पत्तों से रहित हो जाने वाली डाल, बसंत आते ही पत्र-वसना हो जाती है। उसका तप, त्याग मानो सफल हो रहा है। बसंत सभी जगह रस भर देगा और सभी अच्छे कार्यों की फलान्विति की तरह बसंत भी इस पृथ्वी पर विस्तारित होगा। बसंत जीवन में वरदान की तरह आता है इस कविता में सूखी डाल को कवि ने तप करती पार्वती के रूप में स्वीकार किया है। उसकी तपस्या के परिणाम स्वरूप ही उसे बसंत रूपी शिव से विवाह करने का अवसर मिलता है।

गजानन माधव मुक्तिबोध नई कविता के महत्वपूर्ण कवि हैं। इनकी कविताओं में हमारे समय के अन्तर्विरोध प्राप्त होते हैं। मुक्तिबोध के काव्य में विचार तत्व की प्रधानता है। उनके प्रारम्भिक काव्य में ऋतु-वर्णन के सुंदर चित्र प्राप्त होते हैं। बसंत की प्राकृतिक सुषमा का सम्बन्ध मनुष्य की चेतना से भी है। एक तरह से कवि ने बसंत के सम्पूर्ण सौन्दर्य को मनुष्य के माध्यम से ही व्यक्त किया है। बसंत में खिले लाल पुष्प मानो मनुष्य के हृदय के भीतर जलने वाली क्रांति विधात्री आग का ही प्रतिरूप है। यह परस्पर आदान-प्रदान है, जो मनुष्य और प्रकृति के बीच निरंतर चलता रहता है। मनुष्य जब मानवता की भावना से जुड़ता है, तभी उसके भीतर बसंत खिलता है। इस कविता में रुपक के माध्यम से यही सत्य प्रकट किया गया है।

बसंत गीत

सखि बसंत आया।
भरा हर्ष वन के मन,
नवोत्कर्ष छाया।

किसलय-वसना नव-वय-लतिका
मिली मधुर प्रिय-उर तरु-पतिका

मधुप-वृन्द बन्दी-
पिक-स्वर नभ सरसाया

लता-मुकुल-हार-गन्ध भार भर
बही पवन बंद मंद मंदतर
जागी नयनों में बन-
यौवन की माया।

आवृत सरसी-उर-सरसिज उठे
केशर के केश कली के छूटे
स्वर्ण-शस्य-अञ्चल
पृथ्वी का लहराया।

वसन बासंती लेगी

रुखी री यह डाल,
वसन बासंती लेगी।
देख, खड़ी करती तप अपलक,
हीरक-सी-समीर-माला जप,
शैलसुता 'अपर्ण-अशना'

पल्लव-वसना बनेगी-
वसन बासंती लेगी।

हार गले पहना फूलों का,
ऋतुपति सकल सुकृत कूलों का
स्नेह सरस भर देगा उर-सर

स्मर हर को वरेगी-
वसन बासंती लेगी।

मधुव्रत में रत वधू मधुर फल
देगी जग को स्वाद-तोष-दल
गरलामृत शिव आशुतोष-बल

विश्व सकल नेगी-
वसन बासंती लेगी।

- निराला

अमृत का घूँट शक्ति के

आज मैंने शक्ति के अमृत का घूँट पिया,
धरती ने अपना धानी घूँघट उघारकर
मुझमें अपना ज्वलन्त वसन्त निहार लिया।

मेरी हृदय-अग्नि के आसव को पिये, अरे
धरती ने खिलाये हैं ज्वलन्त लाल-लाल
नये-नये फूल कैसे लगते हैं आगभरे
जीवन-सुहाग-भरे!!

मैंने पहचाना भी नहीं कि वे मेरे हैं,
धरती को कहा, तेरे फूल सब तेरे हैं
वसन्त नहीं हूँ, केवल तेरी ही लावण्यमयी,
छाया हूँ, तेरी ही जो मुझ पर ही छा गयी!!

धरती औ' वसन्त के समान ही जो नाता है
धरती है मानव तो वसन्त मानवता है!!

- मुक्तिबोध

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. पृथ्वी का आँचल किस प्रकार का कहा गया है ?
2. बसंत के आगमन पर प्रकृति में क्या-क्या परिवर्तन होते हैं ?
3. 'धरती और बसंत' का आपस में क्या नाता है ?
4. नए-नए फूल कवि को कैसे लगते हैं ?

लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. 'पल्लव-वसना' किसे कहा गया है ?
2. पार्वती और रुखी डाल के बीच कौन-कौन सी समानताएँ हैं ?
3. ''धरती है मानव तो बसंत मानवता है'' कवि की इस उक्ति का आशय समझाइए।

दीर्घ-उत्तरीय प्रश्न -

1. निराला ने नवोत्कर्ष की बात किसके लिए कही है ?
2. ''मधुव्रत में रत वधू मधुर फल, देगी जग को स्वाद तोष दल'' के भाव को स्पष्ट कीजिए।
3. मुक्तिबोध ने प्रकृति को किस रूप में पहचाना है ?

4. 'मुझमें अपना ज्वलंत बसंत निहार लिया' से कवि का क्या आशय है ?

5. मुक्तिबोध ने नए-नए फूलों का वर्णन किस रूप में किया है ?

6. निम्नलिखित पद्यांशों की सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए -

1. किसलय-वसना ..... तरु-पतिका।
2. हीरक-सी समीर ..... अपर्ण अशना।
3. धरती ने ..... निहार लिया।
4. वसंत नहीं हूँ ..... वसंत मानवता है।

काव्य सौन्दर्य -

1. निम्नलिखित शब्दों के पर्यायवाची शब्द लिखिए -

बसंत, मधुप, सरसिज, पल्लव, गरल

2. निम्नलिखित पंक्तियों में से अलंकार पहचान कर लिखिए -

अ. किसलय-वसना नव-वय-लतिका
मिली मधुर प्रिय-उर तरु-पतिका

ब. हीरक-सी-समीर-माला जप

स. धरती ने खिलाये हैं ज्वलंत लाल-लाल

3. निम्नलिखित पँक्तियों में शब्द गुण पहचान कर लिखिए -

स्नेह-सरस भर देगा उर-सर
स्मर हर को वरेगी
वसन बासंती लेगी।

4. वसंत नहीं हूँ केवल तेरी ही लावण्यमयी
छाया हूँ, तेरी हीं जो मुझ पर ही छा गयी
उपर्युक्त पंक्तियों में रस पहचान कर लिखिए। रस का स्थायी-भाव भी लिखिए।

ध्यान दीजिए -

रुखी री यह डाल
वसन बासंती लेगी।
देख, खड़ी करती तप अपलक,
हीरक-सी-समीर-माला जप,
शैलसुता 'अपर्ण-अशना'

उपर्युक्त पंक्तियाँ मुक्तक काव्य का उदाहरण हैं। मुक्तक काव्य में किसी एक अनुभूति, भाव या कल्पना का चित्रण किया जाता है। इसमें प्रत्येक पद स्वतंत्र एवं अपने आप में पूर्ण होता है। मुक्तक काव्य दो प्रकार के होते हैं- पाठ्य मुक्तक और गेय मुक्तक। कबीर, तुलसी, वृंद, रहीम आदि कवियों के भक्ति और नीति विषयक दोहे पाठ्य-मुक्तक के अंतर्गत आते हैं। गेय मुक्तक में भावों की प्रधानता रहती है। सूर, तुलसी, मीरा, प्रसाद, महादेवी आदि के गीत गेय मुक्तक हैं।

5. **मुक्तक काव्य से आप क्या समझते हैं ? आपकी पाठ्यपुस्तक के पद्य भाग में कौन-कौन से पाठ मुक्तक काव्य की श्रेणी में आते हैं ?**

6. **पंक्तियों को पढ़िए तथा नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर दीजिए -**

उषा सुनहले तीर बरसाती
जय-लक्ष्मी-सी उदित हुई,
उधर पराजित कालरात्रि भी,
जल में अंतर्निहित हुई।

- 'उषा के सुनहरे तीर बरसाने' से क्या तात्पर्य है?
- 'कालरात्रि' को पराजित क्यों कहा गया है?
- 'जय-लक्ष्मी-सी उदित हुई' पंक्ति में प्रयुक्त अलंकार का नाम लिखिए।
- उपर्युक्त पद्यांश का भाव लिखिए।

समझिए -

अपठित पद्यांश के प्रश्नों के उत्तर लिखते समय निम्नलिखित बातें ध्यान में रखना चाहिए -

- पद्यांश को दो-तीन बार ध्यान से पढ़ें।
- उत्तर लिखते समय सरल, सुबोध भाषा का प्रयोग करें।
- उत्तर अथवा सारांश लिखते समय पद्यांश का मूल भाव खंडित नहीं होना चाहिए।

योग्यता विस्तार

1. दूरदर्शन पर प्रसारित बसन्त-पर्व का आँखों देखा हाल अपने शब्दों में लिखकर कक्षा में सुनाइए।
2. बसंत ऋतु में कौन-कौन से पर्व मनाए जाते हैं, इनको मनाने का क्या उद्देश्य है शिक्षक से जानिए।
3. फागुन और बसंत के गीतों को सुनिए और उनको शाला के बसंतोत्सव में सुनाइए।

शब्दार्थ

बसंत गीत

किसलय वसना = पत्ते रुपी वस्त्र
मधुपवृन्द = भ्रमर का समूह,
पिकस्वर = कोयल का स्वर,
रुखी = सूखी,
शैलसुता = पर्वत पुत्री (पार्वती)
गरल = विष
ऋतुपति = बसंत,
आशुतोष = शिव,
नेगी = कल्याण , *उपहार (नेग)प्राप्त करने वाला*
अपर्ण अशना = निराहार (पत्ते तक नहीं खाने वाली)
पल्लव वसना = पत्तों के वस्त्र धारण करने वाली

अमृत का घूँट शक्ति के

उघारकर = खोलकर
आसव = रस
लावण्यमयी = सौन्दर्ययुक्त

❋ ❋ ❋

विविधा-2

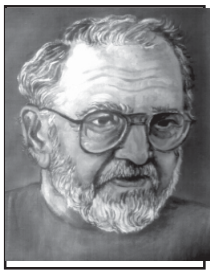

अज्ञेय

कवि परिचय :

हिन्दी साहित्य में 'तार सप्तक' के माध्यम से कवियों और कविताओं की विशिष्ट भावधारा को प्रस्तुत कर आलोकित होने वाले कवि अज्ञेय का पूरा नाम सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' है। वे काव्य रचना के साथ-साथ चित्रकला, मूर्तिकला, पुरातत्व और विज्ञान के नव सृजन में पूर्ण मनोयोग से लगे रहे। नवीन मूल्यों की खोज और उनके काव्यमय प्रस्तुतीकरण के लिए वे सदैव प्रयत्नशील रहे हैं। प्रयोगवाद इनकी सूझ की ही उपज है।

विद्यार्थी जीवन से ही अज्ञेय की रुचि काव्य लेखन में रही है। उनकी पहली कविता 1927 में कॉलेज पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। उसके बाद वे अनवरत साहित्य सृजन में संलग्न रहे। 'भग्नदूत', चिन्ता, 'हरी घास-पर क्षण भर', 'बावरा अहेरी', 'कितनी नावों में कितनी बार' इनके कविता संग्रह हैं। इनकी प्रारम्भिक रचनाओं में छायावादी वैयक्तिकता, निराशा और वेदना के दर्शन होते हैं। प्रयोगवादी रचनाएँ चिन्ताभावों और सौन्दर्य बोध को नया मोड़ देती हैं, अभिव्यक्ति के नए आयामों और रूपों को स्वर देती है।

अज्ञेय कवि ही नहीं कहानीकार और उपन्यासकार भी हैं। 'शेखर एक जीवनी', 'नदी के द्वीप', 'अपने-अपने अजनबी' इनके उपन्यास हैं। इन्होंने कहानियों के अतिरिक्त निबंध, यात्रा-वृत्त आदि अनेक विधाओं पर लेखनी चलाई है।

अज्ञेय बहुमुखी प्रतिभा के कलाकार हैं। वे दिनमान के कुशल सम्पादक के रूप में जाने जाते हैं। उनकी रचनाशीलता और क्रियाशीलता से सजे व्यक्तित्व और कृतित्व की हिन्दी जगत में विशिष्ट छाप है।

वीरेन्द्र मिश्र

कवि परिचय :

कवि एवं गीतकार वीरेन्द्र मिश्र का जन्म दिसम्बर 1927 को ग्वालियर में हुआ था। उन्होंने जीवन मूल्यों के प्रति पूर्णत: समर्पित होकर जीवन जिया। वे अत्यन्त विनम्र, सरल, स्नेहशील, और कोमल हृदय के साथ ही प्रबल आत्माभिमानी, दृढ़ निश्चयी और संघर्षशील साहित्यकार थे। अपने समय में मिश्र जी कवि सम्मेलनों के लिए अपरिहार्य बन गए थे। जून 1975 ई. में वीरेन्द्र मिश्र ने सांसारिक बन्धनों को तोड़ दिया और पंचतत्व में विलीन हो गए।

मिश्र जी की प्रमुख रचनाओं में 'गीतम', 'मधुवंती', 'गीत पंचम', 'उत्सव गीतों की लाश पर', 'वाणी के कर्णधार', 'धरती' 'गीताम्बरा', 'शांति गन्धर्व' आदि प्रमुख हैं। उन्होंने गीत, नवगीत, राष्ट्रीय गीत, मुक्तक के अलावा रेडियो नाटक, एवं बाल-साहित्य की भी रचना की।

मिश्र जी समाज और साहित्य में व्याप्त रुढ़ि, विषमता और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करते रहे। मिश्र जी छायावादोत्तर उन गीतकारों में से हैं जिन्होंने अपने गीतों में अपने समय और समाज की प्रगतिशील आकांक्षाओं को अभिव्यक्त किया है। उनके गीतों में राष्ट्रीय गौरव के साथ-साथ साम्राज्यवाद, पूँजीवाद के घृणित स्वरूप का चित्रण तथा अन्याय, शोषण और विषमता के विरुद्ध एक सच्ची मानवीय चिन्ता के दर्शन होते हैं। इनके गीतों में शक्ति और दृढ़ता, आस्था और विश्वास की प्रतिध्वनियाँ लगातार मिलती हैं। उनके भाव भरे गीतों में जहाँ एक भावुक प्रेमी कवि के प्रणय की अनुगूँज है, वहीं व्यथा एवं पीड़ा के मार्मिक स्वर भी हैं।

वीरेन्द्र मिश्र के गीतों की भाषा सहज, व्यावहारिक तथा लोक प्रचलित शब्दों से युक्त है। उनके गीतों में कसावट और संगीतात्मकता है। अपनी इन्ही विशेषताओं के कारण वीरेन्द्र मिश्र का हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। 1959 में नवगीत के रूप में कविता की भी वापसी हुई। वीरेन्द्र मिश्र इस नवगीत परम्परा के विशिष्ट कवि माने जाते हैं।

केन्द्रीय भाव :

अज्ञेय आधुनिक कविता में युग-प्रवर्त्तक कवि माने जाते हैं। इनका काव्य प्रेम, प्रकृति, समाज आदि के सन्दर्भों को व्यक्त करता है। इनकी शैली ही इनकी पहचान है। अपनी प्रारंभिक कविताओं में वे प्रकृति के अत्यन्त नजदीक हैं; जबकि अपने उत्तरवर्ती काव्य में वे व्यक्तिवादी प्रवृति के स्थापक बनते हैं। प्रस्तुत नई कविता में वे व्यक्ति के महत्व को स्वीकार करते हैं; वे कहते हैं कि समाज एक नदी है और व्यक्ति इस नदी में द्वीप जैसा है। यद्यपि समाज ही व्यक्ति का निर्माण करता है; किन्तु समाज में व्यक्ति पूरी तरह से अपनी पहचान समर्पित नहीं कर सकता। व्यक्तित्व की अपनी छवि होती है; इस छबि को बनाए रखना भी जरूरी है; किन्तु ऐसा भी न हो कि व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की रक्षा में इतना संलग्न हो जाए कि वह समाज की उपेक्षा करने लगे। उसे समाज के विकास और उसके प्रवाह को भी सुरक्षित रखना है।

वीरेन्द्र मिश्र छायावादोत्तर नव गीतकारों में अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। उनके गीतों में प्रेम, प्रकृति और समाज के चित्रण के साथ-साथ राष्ट्रीय-भावना भी विद्यमान है। प्रस्तुत गीत में उन्होंने भारतमाता के वैभव का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। भारत की सांस्कृतिक-चेतना, उसकी प्राकृतिक सुषमा का गीतात्मक विकास करते हुए गीतकार ने भारतमाता को निरन्तर विजयिनी बनाने का उद्घोष किया है।

नदी के द्वीप

हम नदी के द्वीप हैं।
हम नहीं कहते कि हम को छोड़कर स्रोतस्विनी बह जाय।
वह हमें आकार देती है।
हमारे कोण, गलियाँ, अन्तरीप, उभार, सैकत-कूल,
सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी हैं।

माँ है वह। है, इसी से हम बने हैं।

किन्तु हम हैं द्वीप, हम धारा नहीं हैं,
स्थिर समर्पण है हमारा, हम सदा से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के
किन्तु हम बहते नहीं हैं, क्योंकि बहना रेत होना है।

हम बहेंगे तो रहेंगे ही नहीं।
पैर उखड़ेंगे, प्लवन होगा, ढहेंगे, सहेंगे, बह जायेंगे।

और फिर हम चूर्ण होकर भी कभी क्या धारा बन सकते?
रेत बन कर हम सलिल को तनिक गँदला ही करेंगे-
अनुपयोगी ही बनायेंगे।

द्वीप हैं हम। यह नहीं है शाप। यह अपनी नियति है।
हम नदी के पुत्र हैं। बैठे नदी की क्रोड़ में।
वह बृहद भूखंड से हम को मिलाती है।
और वह भूखंड अपना पितर है।

नदी, तुम बहती चलो।
भूखंड से जो दाय हमको मिला है, मिलता रहा है,
माँजती, संस्कार देती चलो। यदि ऐसा कभी हो–
तुम्हारे आह्लाद से या दूसरों के किसी स्वैराचार से, अतिचार से,
तुम बढ़ो, प्लावन तुम्हारा घरघराता उठे–
यह स्रोतस्विनी ही कर्मनाशा कीर्तिनाशा घोर काल प्रवाहिनी बन जाय–
तो हमें स्वीकार है वह भी। उसी में रेत होकर
फिर छनेंगे हम। जमेंगे हम। कहीं फिर पैर टेकेंगे।
कहीं फिर भी खड़ा होगा नये व्यक्तित्व का आकार।
मात; उसे फिर संस्कार तुम देना।

– अज्ञेय

भारत माता की जय बोल दो

साँझ–सकारे चंदा–सूरज करते जिसकी आरती
उस मिट्टी में मन का सोना डाल दो
ग्रह–नक्षत्रों! भारत की जय बोल दो।
वह माली है, वह खुशबू है, हम चमन,
वह मूरत है, वह मंदिर है, हम नमन,
छाया है माथे पर आशीर्वाद–सा,
वह संस्कृतियों के मीठे संवाद–सा
उसकी देहरी पर अपना माथा टेककर,
हम उन्नत होते हैं उसको देखकर,
ऋतुओ! उसको नित नूतन परिधान दो,
झुलस रही है धरती, सावन–दान दो,
सरल नहीं परिवर्तन में मन ढालना,
हर पर्वत से भागीरथी निकालना,

जिस मंदिर–मस्जिद–गिरजे में कैद पड़ा इंसान हो,
आओ, उसमें किरन! किवाड़ा खोल दो,
कुंकुम–पत्रों! भारत की जय बोल दो
उसको करो प्रणाम, दृगों में नीर है,
झेलम की आँखोंवाला कश्मीर है,
बजरे और शिकारे उसकी झील के,
लगते बनजारे तारे कंदील–से,

किसी नारियल-वन की गेय सुगंध से,
अंतरीप के दूरागत मकरंद से,
फूटा करता नए गीत का अंतरा,
कुछ क्षण को दुख भूल, विहँसती है धरा,
दो छवि-कालों के अंतर-आवास में,
कोई बादल घुमड़ रहा आकाश में,

सर्जन की मंगल-बेला में धूमकेतु क्या चाहता
बच्चों की पावन उत्सुकता तौल दो,
देशज मित्रों! भारत की जय बोल दो।
हम अनेकता में भी तो हैं एक ही
हर झगड़े में जीता सदा विवेक ही,
कृति, आकृति, संस्कृति भाषा के वास्ते,
बने हुए हैं मिलते-जुलते रास्ते,
आस्थाओं की टकराहट से लाभ क्या ?
मंजिल को हम देंगे भला जवाब क्या ?
हम टूटे तो टूटेगा यह देश भी,
मैला वैचारिक परिवेश भी,
सर्जन-रत हो आजादी के दिन जियो,
श्रमकर्ताओ, रचनाकारों, साथियों।

शांति और संस्कृति की जो बहती-स्वाधीन जाह्नवी
कोई रोके, बलिदानी रंग घोल दो,
रक्त चरित्रों! भारत की जय बोल दो।

- वीरेन्द्र मिश्र

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. कवि ने द्वीप को किसका पुत्र कहा है ?
2. नदी सदा गतिशील रहकर क्या दान देती है ?
3. साँझ सकारे भारत माता की आरती कौन करता है ?
4. कवि ने भारत माता की जय-जयकार का आह्वान किससे किया है?
5. झुलसती धरा के लिए किस दान की आवश्यकता है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. नदी द्वीप को किस प्रकार आकार देती है ?

2. 'भारत माता की जय बोल' कविता में किन-किन प्राकृतिक उपादानों का उल्लेख किया है ?
3. कवि ने प्रकृति से भारत को सजाने-सँवारने का अनुरोध क्यों किया है ?
4. कवि मिश्र ने देशवासियों के मिलजुलकर रहने पर अत्यधिक बल क्यों दिया है ?
5. बलिदानी रंग से कवि का क्या तात्पर्य है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. द्वीप की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. नदी हमें किस प्रकार संस्कार देती है ? स्पष्ट कीजिए।
3. 'नदी के द्वीप' कविता का मूल भाव अपने शब्दों में लिखिए।
4. कवि मिश्र ने प्रकृति के उपादानों से भारत माता के लिए क्या-क्या करने को कहा है ?
5. **वह माली है, वह खुशबू है, हम चमन,**
   वह मूरत है, वह मंदिर है, हम नमन।

   इन पंक्तियों में माली, खुशबू, मूरत और मन्दिर किसे कहा गया है और क्यों ?
6. कवि ने भारतीयों को 'रक्त चरित्रों' कहकर क्यों सम्बोधित किया है ?
7. मंदिर, मस्जिद और गिरजाघर में मानव कैसे कैद हो सकता है ? इनमें कैद मानव को मुक्त कैसे किया जा सकता है ?

काव्य सौन्दर्य

1. **अलंकार छाँटिए -**

   क **छाया है माथे पर आशीर्वाद-सा,**
   वह संस्कृतियों के मीठे संवाद-सा।

   ख. **स्थिर समर्पण है हमारा,**
   हम सदा से द्वीप हैं स्त्रोतस्विनी के।

पढ़िए और समझिए -

- **हम नदी के द्वीप हैं।**
  हम नहीं कहते कि हमको छोड़कर स्त्रोतस्विनी बह जाए,
  वह हमें आकार देती है।

- **उसकी देहरी पर अपना माथा टेककर,**
  हम उन्नत होते हैं उसको देखकर,
  ऋतुओं ! उसको नित नूतन परिधान दो,
  झुलस रही है धरती, सावन दान दो।

ऊपर लिखे पद्यांशों में पहला गद्यात्मक है। उसमें संगीतात्मकता का अभाव है। इस प्रकार के पद्यांश अतुकान्त अथवा मुक्त छन्द कहलाते हैं।

दूसरा पद्यांश लययुक्त है; उसमें संगीतात्मकता है अत: वह गेय पद है।

2. **नवगीत और अतुकांत पदों में क्या अन्तर है ?**

3. **निम्नलिखित सामासिक पदों का विग्रह कर समास का नाम लिखिए -**

चंदा-सूरज, भूखंड, कर्मनाशा, नारियलवन

4. **निम्नांकित शब्दों के दो-दो पर्यायवाची शब्द लिखिए -**

धरती, सुगंध, नदी, पुत्र, पैर।

इन पंक्तियों को ध्यान से पढ़िए -

अति रिस बोले बचन कठोरा।
कहु जड़ जनक धनुष केहि तोरा॥
बेगि देखाव मूढ़ नतु आजू।
उलटौ महि जहँ लगि तव राजू॥

उपर्युक्त पंक्तियों को पढ़ने से हमें क्रोध के भाव की अनुभूति होती है, ऐसी पंक्तियाँ जिन्हें पढ़ने या सुनने से आप में क्रोध या रौद्र का भाव जागे वहाँ रौद्र रस होता है। जब काव्य में क्रोध भाव का वर्णन हो तब रौद्र रस की निष्पत्ति होती है। रौद्र रस का स्थायी भाव 'क्रोध' है।

और समझिए -

उदाहरण - **सिर पर बैठ्यो काग, आँख दोउ खात निकारत।**
खींचत जीभहि स्यार अतिहि, आनन्द उर धारत॥

काव्य में जब घृणा उत्पन्न करने वाले दृश्य हों तब **वीभत्स** रस की निष्पति होती है। वीभत्स रस का स्थायी भाव 'घृणा' है।

योग्यता विस्तार

1. 'अनेकता में एकता, हिन्द की विशेषता' इस विषय पर कक्षा में भाषण प्रतियोगिता आयोजित कीजिए और इसमें उत्साह से भाग लीजिए।
2. स्वतंत्र भारत में हम देश के विकास के लिए क्या कार्य कर रहे हैं ? एक फाइल में जानकारी लिखकर सम्बन्धित चित्र भी लगाइए।
3. नदियों की महिमा को जानिए और अपने क्षेत्र के जल संरक्षण हेतु कुछ कार्य करने का संकल्प लीजिए।

शब्दार्थ

नदी के द्वीप :

स्रोतस्विनी = नदी, *अंतरीप* = द्वीपों के मध्य की उठान, *क्रोड़* = गोद, *स्वैराचार* = स्वेच्छाचार, *अतिचार* = अत्याचार, अन्याय।

भारतमाता की जय बोल दो :

भागीरथी = गंगा, *कंदील* = लालटेन, चिमनी, *मकरंद* = पराग, *अंतरा* = विराम, *जाह्नवी* = गंगा।

❋ ❋ ❋

सहायक वाचन

अध्याय
1

उत्तराखंड की यात्रा

– सेठ गोविन्द दास

उत्तराखण्ड के यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी, केदारनाथ और बद्रीनाथ की जिस यात्रा के सम्बन्ध में मैं आपसे यहाँ चर्चा कर रहा हूँ, वह यात्रा बड़ी लम्बी और कठिन है। मैं देश में निरन्तर घूमता रहता हूँ और विदेशों में भी अनेक बार गया हूँ। किन्तु, इतनी लगातार लम्बी, पैदल और कठिन यात्रा मैंने कभी नहीं की। अत: अनेक शारीरिक कष्ट इस यात्रा में हुए। किन्तु इन कष्टों के विपरीत जो मानसिक आनन्द हमें यहाँ के प्राकृतिक दृश्यों के कारण मिला, उससे ये कष्ट हमें अधिक दुख न दे सके। यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य की तुलना में न काश्मीर के दृश्य हैं, न स्विट्जरलैण्ड के। काश्मीर के अमरनाथ के कुछ दृश्य अधिक सुन्दर हो सकते हैं किन्तु जो एक प्रकार की महानता हमें यहाँ इन दृश्यों में दृष्टि-गोचर हुई, वह अन्यत्र कहीं नहीं।

उत्तराखण्ड के चारों धाम चार पवित्र नदियों के तट पर स्थित हैं। यमनोत्तरी का मार्ग यमुना के किनारे-किनारे, गंगोत्तरी का मार्ग गंगा के किनारे-किनारे, केदारनाथ का मार्ग मन्दाकिनी के किनारे-किनारे तथा बद्रीनाथ का मार्ग अलकनन्दा के किनारे-किनारे गया है। यात्रा के प्रारम्भ में पहले हमें साधारण वृक्षों के जंगल मिले; फिर एक खास ऊँचाई पर चीड़ के। चीड़ का वृक्ष बड़ा सुन्दर होता है। इसकी शाखाएँ पत्र-गुच्छों से लदी रहती हैं। आप इन वृक्षों को दिल्ली में सेक्रेटरीयट के समीप देख सकते हैं। इन वृक्षों के वहाँ घने जंगल हैं। फिर हमें देवदारु के वृक्ष मिले। देवदारु के वृक्ष चीड़ के वृक्षों से भी अधिक सुन्दर होते हैं। इनमें चीड़ के वृक्षों की अपेक्षा अधिक हरे पत्र-गुच्छ रहते हैं। सघन देवदारु के वृक्षों से पर्वत की शोभा द्विगुणित हो जाती है। ऊँचे-ऊँचे शिखरों से गिरते अगणित जल-प्रपातों से तथा हिमानी शृंगों से इस वन प्रदेश की शोभा में चार चाँद लग गए हैं। जिस प्रकार के यत्र-तत्र शोभायमान हो रहे हिम-शृंग हमें यहाँ दिखे, विशेषकर केदारनाथ की वह हिमानी, जिसकी ऊँचाई तेईस हजार फुट है; उस प्रकार की इतनी विशाल, भव्य और ऊँची हिमानी संसार में हमने कहीं नहीं देखी।

फिर चारों नदियों का आप प्रवाह देखिए। यमुना का श्याम, गंगा का श्वेत, मंदाकिनी का हरा और अलकनन्दा का नीला नीर भिन्न-भिन्न उद्गमों से निकलकर, भिन्न-भिन्न मार्गों से बहकर, भिन्न-भिन्न धामों को जाने वाले हम लोगों को अत्यंत सुखदायक लगा। अब जरा इनके प्रवाह की गति देखिए कल-कल करती कालिन्दी अपना श्यामवर्ण लिए श्याम पाषाणों पर बहती है, भागीरथी अपने श्वेत नीर से श्वेत और नीले पाषाण-खण्ड को चीरती किस शान, किस तूफानी वेग से तुमुलनाद करती चलती है, जिसके रूप और गति को देख हम चकित, स्तंभित और भयभीत भी हो जाते थे। ऐसा प्रवाह मैंने दुनिया की किसी नदी में नहीं देखा। अलकनन्दा भी कहीं वेग से और कहीं शांति से भागीरथी के अनुसरण में किसी विरह-बाला की तरह दौड़ी जाती है। फिर जहाँ इन नदियों के संगम हैं, वहाँ के दृश्य और भी मनोहर हैं। इन संगमों से आगे जो प्रवाह बहता है, उसके नामकरण में हमारे ऋषि-मुनियों की अन्तर्दृष्टि का हमें आभास मिलता है। रुद्र प्रयाग में मन्दाकिनी का हरित नीर, अलकनन्दा के नीले नीर में समा गया है। अत: रुद्रप्रयाग के आगे के प्रवाह

का नाम अलकनन्दा है। देवप्रयाग में अलकनन्दा का नीला पानी भागीरथी के श्वेत नीर में समा जाता है; और भागीरथी का श्वेत प्रवाह आगे बढ़ता है। इसलिए इसका नाम गंगा ही आगे माना गया है। प्रयागराज में ही देखिए, यमुना का श्याम जल परिमाण में अधिक होते हुए भी गंगा में मिलते ही विलीन हो जाता है। अत: आगे गंगा का ही नाम चला।

उत्तराखण्ड के चारों धामों में यमुनोत्तरी और गंगोत्तरी का मार्ग जितना बीहड़ और संकीर्ण है, उतना केदारनाथ और बद्रीनाथ का नहीं। यमुनोत्तरी और गंगोत्तरी में एकदम सीधी और विकट चढ़ाइयाँ हैं, और फिर दो-ढाई और तीन फुट तक का सँकरा मार्ग, हजारों फीट नीचे गहरे, भयानक खंदक और इन सरिताओं का प्रवाह। कहीं-कहीं ऊपर सिर पर कच्चे पहाड़, जिनके टूटने का भय बना रहता है। यमुनोत्तरी के मार्ग में एक जगह तो पहाड़ों में चर रही भेंड़ों ने कुछ पत्थरों की वर्षा भी इन कच्चे पहाड़ों के कारण कर दी थी। हाँ, केदारनाथ और बद्रीनाथ का मार्ग अच्छा है। चढ़ाई है, पर एकदम सीधी नहीं। मार्ग चौड़ा है, घुमाव पर मेंढ़ें बना दी गई हैं।

हम लोग यात्रा पर धार्मिक भावना से गए थे। वहाँ हमने देखा किस प्रकार का पूजन होता है। केदारनाथ और बद्रीनाथ में पूजा की जो विधि मैंने देखी, उससे भी मैं अत्यंत प्रभावित हुआ। रुद्री के महामन्त्रों के साथ केदारनाथ के रुद्राभिषेक और शुक्ल यजुर्वेद की स्वर सहित ऋचाओं के साथ बद्रीनाथ के पंचामृत स्नान ने हमें गद्-गद् कर दिया। इस तरह विधि-विधान से पूर्ण पूजा जैसी मैंने वहाँ देखी वैसी और कहीं नहीं।

ऐसा सुन्दर, धार्मिक और सांस्कृतिक भव्य वायुमण्डल का यह दृश्य केदारनाथ और बद्रीनाथ के इन मन्दिरों में देखकर मुझे जो रहस्य अनुभव हुआ वह वर्णनातीत है। जबसे हमारे ऋषि-मुनियों ने इन पवित्र तीर्थों की स्थापना की, तबसे हमारी आस्तिक धर्म प्राण जनता का यहाँ हर वर्ष मेला लग रहा है; और आज भी मार्ग की अनंत असुविधाओं और पहाड़ों की भीषण दुर्गमताओं के होते हुए भी यात्रियों की यह संख्या दिनों-दिन बढ़ती ही जाती है। कदाचित कोई यह कहे कि अब पहले की अपेक्षा मार्ग अच्छे हो गए हैं, इसलिए लोग आते हैं। किन्तु, मैं उनसे निवेदन करूँगा कि अमरनाथ के अत्यन्त दुर्गम मार्ग में आज भी लोग जाते हैं। क्या वे वहाँ के प्राकृतिक दृश्यों को देखने जाते हैं ? बात ऐसी नहीं है। यदि वहाँ भी कैलाश और मानसरोवर के सदृश्य प्राकृतिक सौन्दर्य मात्र होता तो कोई कदापि नहीं जाता। लोगों को उनकी धार्मिक भावनाओं के साकार दर्शन इन पवित्र देवालयों में होते हैं, वे भले ही कितने ही ऊँचे शिखर और कितने ही दुर्गम मार्ग द्वारा उन्हें प्राप्त हों, श्रद्धा और भक्ति के आसरे अनन्त कठिनाइयों को झेलते लोग आतुरभाव से दौड़ जाएगें। तपोवनों का समय अब बीत गया है। अब तो हमारी धार्मिक भावनाओं के उद्गम तीर्थस्थलों, देवालयों का समय है, जहाँ से हमारे धर्म और संस्कृति में प्राणों का संचार होता है।

मैं सगुणोपासना और मन्दिरों की मूर्तियों को धर्म के विकास का एक बहुत बड़ा साधन मानता हूँ। बद्रीनाथ की मूर्ति को लीजिए। इस मूर्ति में 'जा की रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन तैसी' के अनुसार दर्शन होते हैं। 'यह मूर्ति डेढ़ फुट ऊँचे श्याम संगमरमर की है। वैष्णवों को इस मूर्ति में भगवान विष्णु के दर्शन हुए', शैवों को शिव के होते हैं, जैनियों को तीर्थकर के और बौद्धों को भगवान बुद्ध के। अत्यंत हर्ष का विषय है कि कम-से-कम एक मूर्ति तो ऐसी है ही जिसमें भारत के विभिन्न वर्गों, क्षेत्रों और सम्प्रदायों के लोगों के इष्टदेव प्रतिभासित होते हैं। यह भारत की समन्वयकारी संस्कृति की प्रतीक बन गई है।

महर्षि वेदव्यास और शंकराचार्य आदि के कार्यों में उनके निवास स्थान के हमें आज भी यहाँ प्रत्यक्ष दर्शन हुए।

वेदव्यास ने यहीं महाभारत की रचना की थी। इसके प्रमाण में महाभारत में उनके द्वारा की गई इस स्थल की वंदना में लिखा गया महाभारत का पहला श्लोक यहाँ देना पर्याप्त होगा।

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्॥

यहीं निकट जो व्यास गुफा है, उसके समीप नर और नारायण पर्वत तथा सरस्वती का पावन प्रवाह है। गुफा से तीनों के सुन्दर दर्शन होते हैं। इस श्लोक में एक और व्यासजी ने नर, नारायण और सरस्वती की वंदना की; और दूसरी ओर नर नारायण पर्वत तथा सरस्वती नदी की।

ज्योतिर्मठ में हमने शहतूत का वह वृक्ष भी देखा, जिसके नीचे तपोभूत शंकराचार्य को ज्योति के दर्शन हुए; और उसके निकट ही उनकी वह शंकर गुफा भी देखी जिसमें वह निवास किया करते थे। इसी वृक्ष के नीचे भगवान् शंकराचार्य ने तत्वज्ञान के उस महान ग्रंथ शांकर भाष्य की रचना की थी। ज्योतिर्मठ का सेव, नासपाती, अखरोट आदि फलों के लदे पौधों का बगीचा, संस्कृत का विद्यालय आज भी जगतगुरु शंकराचार्य के पवित्र प्रयत्नों और संकल्पों को दुहरा रहा है जिसके दर्शन मात्र से हमने महान प्रेरणा पाई।

हमारे ऋषि-मुनियों ने दूर तपोवनों में एकान्त साधना द्वारा सदैव भारत की जो एकता तथा हित की चिन्तना की है, वह उनके कार्यों द्वारा सिद्ध हो जाती है। यहाँ उनकी इस भारतीय एकता की भावना की पुष्टि में एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा। भारत के उत्तर में स्थित इन दो देव मंदिरों; केदारनाथ और बद्रीनाथ के पुजारी जिन्हे रावल कहा जाता है, उत्तर के न होकर केदारनाथ के कर्नाटक से और बद्रीनाथ के केरल से आते हैं। आज पर्यन्त उनके द्वारा निर्धारित की गई पद्धति और नियम का पूर्णतया पालन हो रहा है। भारत को एक सूत्रता में बाँध रखने की भावना का दर्शन हमारे इन मंदिरों के पूजन-नियम में अनुभव कर किस भारतीय का मस्तक श्रद्धा से इन ऋषि चरणों में न झुक जाएगा ?

हम यद्यपि इस यात्रा के लिए प्रधानतया धार्मिक भावना से ही गए थे, तथापि जब तक आधिभौतिक शरीर है, जिसके लिए कहा गया है.... 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनं' तब तक मानव किस प्रकार रहता है और क्या-क्या सहता है, इससे भी आँखें नहीं मूँदी जा सकती हैं। अत: आध्यात्मिक प्रेरणा से इन सात सप्ताहों का जीवन ओत-प्रोत रहने पर भी हम यहाँ की गरीबी को देख दुखी हुए बिना नहीं रह सके। यहाँ इतना पानी है जितना अन्यत्र कहीं नहीं। उसका सिंचाई में कम से कम उपयोग होता है। इस सिंचाई से केवल अधिक अन्न ही नहीं उपजाया जा सकता परन्तु लम्बे-चौड़े फलों के उद्यान भी लगाए जा सकते हैं। खनिज पदार्थों की खोज करके उन खनिज पदार्थों को पर्वतराज के पेट से निकालकर जन-उपयोग में लाया जा सकता है, जंगली वृक्ष और बाँस से कागज की उत्पत्ति की जा सकती है। भेड़ों की नस्लों को सुधारकर उनसे ऊन की उत्पत्ति बढ़ा, ऊन के गृह उद्योग जारी किए जा सकते हैं। न जाने क्या-क्या किया जा सकता है। इस प्रकार यह प्रदेश जितनी आध्यात्मिक प्रेरणा प्रदान करता है, उतनी ही आधिभौतिक दृष्टि से सम्पन्न बनाया जा सकता है।

अभ्यास

1. उत्तराखंड के अन्तर्गत कौन-कौन से तीर्थ हैं ? उत्तराखंड की यात्रा में शारीरिक कष्ट के विपरीत किस प्रकार का आनंद मिलता है ? और क्यों ?
2. उत्तराखंड के चारों धाम किन चार पवित्र नदियों के किनारे स्थित हैं ?
3. उत्तराखंड के प्राकृतिक दृश्य श्रद्धालुओं को क्यों आकर्षित करते हैं ?
4. ज्योतिर्मठ के विषय में संक्षिप्त जानकारी लिखिए।
5. ''हमारे ऋषि-मुनियों ने तपोवनों में भारत की एकता पर चिंतन किया है।''- समझाइए।
6. लेखक ने उत्तराखंड के प्राकृतिक संसाधनों के बारे में क्या लिखा है ? अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।
7. इस यात्रा-वृत्तांत को पढ़कर आपके मन में कौन-कौन सी प्रेरणाएँ जागती हैं ? लिखिए।

योग्यता विस्तार

1. ''वर्तमान में उत्तराखंड की यात्रा किस तरह से सरल हो गई है''- अपने शिक्षकों तथा अभिभावकों से पूछकर जानकारी एकत्र कीजिए।
2. ''हिमालय भारत का प्रहरी है'' - इस विषय पर कक्षा में भाषण प्रतियोगिता आयोजित कीजिए।
3. आपने किसी धार्मिक अथवा ऐतिहासिक स्थान की यात्रा की हो, तो उसका वर्णन यात्रा शैली में लिखिए।
4. उत्तरांचल प्रदेश के मानचित्र में उत्तराखंड के चारों धाम और पहुँच-मार्ग चिन्हित कीजिए।

❋ ❋ ❋

अध्याय
2

गौरा

- महादेवी वर्मा

गौरा मेरी बहिन के घर पली हुई गाय की वय:सन्धि तक पहुँची हुई बछिया थी। उसे इतने स्नेह और दुलार से पाला गया था कि वह अन्य गोवत्साओं से कुछ विशिष्ट हो गई थी।

बहिन ने एक दिन कहा, तुम इतने पशु-पक्षी पाला करती हो- एक गाय क्यों नहीं पाल लेती, जिसका कुछ उपयोग हो। वास्तव में मेरी छोटी बहिन श्यामा अपनी लौकिक बुद्धि में मुझसे बहुत बड़ी है और बचपन से उनकी कर्मनिष्ठ तथा व्यवहारकुशलता की बहुत प्रशंसा होती रही है, विशेषत: मेरी तुलना में।

यदि वे आत्मविश्वास के साथ कुछ कहती हैं तो उनका विचार संक्रामक रोग के समान सुनने वाले को तत्काल प्रभावित करता है। आश्चर्य नहीं, उस दिन उनके उपयोगितावाद संबंधी भाषण ने मुझे इतना अधिक प्रभावित किया कि तत्काल उस सुझाव का क्रियान्वयन आवश्यक हो गया।

वैसे खाद्य की किसी भी समस्या के समाधान के कारण पशु-पक्षी पालना मुझे कभी नहीं रुचा। बकरी, कुक्कुट, मछली आदि पालने के मूल उद्देश्य का ध्यान आते ही मेरा मन विद्रोह करने लगता है।

पर उस दिन मैंने ध्यानपूर्वक गौरा को देखा। पुष्ट लचीले पैर, भरे पुट्ठे, चिकनी भरी हुई पीठ, लम्बी सुडौल गर्दन, निकलते हुए छोटे-छोटे सींग, भीतर की लालिमा की झलक देते हुए कमल की दो अधखुली पंखुड़ियों जैसे कान, लम्बी और अंतिम छोर पर काले सघन चामर का स्मरण दिलाने वाली पूँछ, सब कुछ साँचे में ढला हुआ सा था। गाय को मानो इटैलियन मार्बल में तराशकर उस पर ओप दी गई हो।

स्वस्थ पशु के रोमों की सफेदी में एक विशेष चमक होती है। गौरा की उज्ज्वलता देखकर ऐसा लगा, मानो उसके रोमों पर अभ्रक का चूर्ण मल दिया गया हो, जिसके कारण जिधर आलोक पड़ता था, उधर विशेष चमक उत्पन्न हो जाती थी।

गौरा को देखते ही मेरी पालने के संबंध में दुविधा निश्चय में बदल गई।

गाय जब मेरे बंगले पर पहुँची, तब मेरे परिचितों और परिचायकों में श्रद्धा का ज्वार-सा उमड़ गया। उसे लाल-सफेद गुलाबों की माला पहनाई गई, केशर-रोली का बड़ा सा टीका लगाया गया, घी का चौमुखा दिया जलाकर आरती उतारी गई और उसे दही-पेड़ा खिलाया गया। उसका नामकरण हुआ गौरांगिनी या गौरा। पता नहीं, इस पूजा-अर्चा का उस पर क्या प्रभाव पड़ा, परन्तु वह बहुत प्रसन्न जान पड़ी। उसकी बड़ी, चमकीली और काली आँखों से जब आरती के दिये की लौ प्रतिफलित होकर झिलमिलाने लगी, तब कई दियों का भ्रम होने लगा। जान पड़ा, जैसे रात में काली दिखने वाली लहर पर किसी ने कई दिये प्रवाहित कर दिए हों।

गौरा वास्तव में बहुत प्रियदर्शन थी, विशेषत: उसकी काली बिल्लौरी आँखों का तरल सौन्दर्य तो दृष्टि को बाँधकर स्थिर कर देता था। चौड़े, उज्ज्वल माथे और लम्बे तथा साँचे में ढले हुए से मुख पर आँखें बर्फ में नीले जल के कुण्डों के समान लगती थीं। उनमें एक अनोखा विश्वास का भाव रहता था। गाय के नेत्रों में हिरन के नेत्रों जैसा चकित

विस्मय न होकर एक आत्मीय विश्वास ही रहता है। उस पशु को मनुष्य से यातना ही नहीं, निर्मम मृत्यु तक प्राप्त होती है, परन्तु उसकी आँखों के विश्वास का स्थान न विस्मय ले पाता है, न आतंक।

महात्मा गांधी ने ''गाय करुणा की कविता है'', क्यों कहा, यह उसकी आँखें देखकर ही समझ में आ सकता है।

गौरा की अलग मन्थर गति से तुलना करने योग्य कम वस्तुएँ हैं। तीव्र गति में सौन्दर्य है परन्तु वह मन्थर गति के सौन्दर्य को नहीं पाता। बाण की तीव्र गति क्षण भर के लिए दृष्टि में चकाचौंध उत्पन्न कर सकती है, परन्तु मन्द समीर से फूल का अपने वृन्त पर हौले-हौले हिलना दृष्टि का उत्सव है।

कुछ ही दिनों में वह इतनी हिलमिल गई कि अन्य पशु-पक्षी अपनी लघुता और उसकी विशालता का अन्तर भूल गए। कुत्ते-बिल्ली उसके पेट के नीचे और पैरों के बीच में खेलने लगे। पक्षी उसकी पीठ और माथे पर बैठकर उसके कान तथा आँखें खुजलाने लगे। वह भी स्थिर खड़ी रहकर और आँखें मूँदकर मानो उनके सम्पर्क-सुख की अनुभूति में खो जाती थी।

हम सबको वह आवाज से नहीं, पैर की आहट से भी पहचानने लगी। समय का इतना अधिक बोध उसे हो गया था कि मोटर के फाटक में प्रवेश करते ही वह बाँ-बाँ की ध्वनि में हमें पुकारने लगती। चाय, नाश्ता तथा भोजन के समय से भी वह इतनी परिचित थी कि थोड़ी देर कुछ पाने की प्रतीक्षा करने के उपरान्त रँभा-रँभाकर घर सिर पर उठा लेती थी।

उसका हमसे साहचर्यजनित लगाव स्नेह के समान ही निकटता चाहता था। निकट जाने पर वह सहलाने के लिए गर्दन बढ़ा देती, हाथ फेरने पर अपना मुख आश्वस्त भाव से कन्धे पर रखकर आँखें मूँद लेती। जब उससे दूर जाने लगते, तब गर्दन घुमा-घुमा कर देखती रहती। आवश्यकता के लिए तो उसके पास एक ही ध्वनि थी, परन्तु उल्लास, दुख, उदासीनता, आकुलता, आदि की अनेक छाया-छवियाँ उसकी बड़ी और काली आँखों में तैरा करती थीं।

एक वर्ष के उपरान्त गौरा एक पुष्ट सुंदर वत्स की माता बनी। वत्स अपने लाल रंग के कारण गेरू का पुतला जैसा जान पड़ता था। उसके माथे पर पान के आकार का श्वेत तिलक और चारों पैरों में खुरों के ऊपर सफेद वलय ऐसे लगते थे, मानों गेरू की बनी वत्समूर्ति को चाँदी के आभूषणों से अलंकृत कर दिया गया हो। बछड़े का नाम रखा गया 'लालमणि', परन्तु उसे सब लाल के सम्बोधन से पुकारने लगे। माता-पुत्र दोनों निकट रहने पर हिमराशि और जलते अंगारे का स्मरण कराते थे। अब हमारे घर में मानों दुग्ध-महोत्सव आरम्भ हुआ। गौरा प्रातः सायं बारह सेर के लगभग दूध देती थी, अतः लालमणि के लिए कई सेर छोड़ देने पर भी इतना अधिक शेष रहता था कि आस-पास के बालगोपाल से लेकर कुत्ते-बिल्ली तक सब पर मानो 'दूधों नहाओ' का आशीर्वाद फलित होने लगा। कुत्ते-बिल्लियों ने तो एक अद्‌भुत दृश्य उपस्थित कर दिया था। दुग्ध-दोहन के समय वे सब गौरा के सामने एक पंक्ति में बैठ जाते और महादेव उनके आगे उनके खाने के लिए निश्चित बर्तन रख देता। किसी विशेष आयोजन पर आमन्त्रित अतिथियों के समान वे परम शिष्टता का परिचय देते हुए प्रतीक्षा करते रहते। फिर नाप-नाप कर सबके पात्रों में दूध डाल दिया जाता, जिसे पीने के उपरान्त वे एक बार फिर अपने-अपने स्वर में कृतज्ञता ज्ञापन-सा करते हुए गौरा के चारों और उछलने-कूदने लगते। जिस दिन उनके आने में विलम्ब होता, वह रँभा-रँभाकर मानो उन्हें पुकारने लगती।

पर अब दुग्ध दोहन की समस्या कोई स्थायी समाधान चाहती थी। नौकरों में नागरिकों में तो कोई दुहना जानते ही नहीं थे और जो गाँव से आए थे, वे अनभ्यास के कारण यह कार्य इतना भूल चुके थे कि घण्टों लगा देते थे। गौरा के दूध देने के पूर्व जो ग्वाल हमारे यहाँ दूध देता था, जब उसने इस कार्य के लिए अपनी नियुक्ति के विषय में आग्रह किया, तब हमने अपनी समस्या का समाधान पा लिया।

दो-तीन मास के उपरान्त गौरा ने दाना-चारा खाना बहुत कम कर दिया और वह उत्तरोत्तर दुर्बल और शिथिल रहने लगी। चिन्तित होकर मैंने पशु-चिकित्सकों को बुलाकर दिखाया। वे कई दिनों तक अनेक प्रकार के निरीक्षण, परीक्षण, एक्सरे आदि द्वारा रोग का निदान खोजते रहे। अन्त में उन्होंने निर्णय लिया कि गाय को सुई खिला दी गई है, जो उसके रक्त-संचार के साथ हृदय तक पहुँच गई है। जब सुई गाय के हृदय के पार हो जाएगी तब रक्त-संचार रुकने से उसकी मृत्यु निश्चित है।

मुझे कष्ट और आश्चर्य दोनों की अनुभूति हुई। सुई खिलाने का क्या तात्पर्य हो सकता है ? दाना-चारा तो हम स्वयं देखभाल कर देते हैं, परन्तु संभव है, उसी में सुई चली गई हो। पर डॉक्टर के उत्तर से ज्ञात हुआ कि दाने-चारे के साथ गई सुई गाय के मुख में ही छिदकर रह जाती है और अंततः रक्तसंचार में मिलकर हृदय में पहुँच सकती है।

अन्त में, एक ऐसा निर्मम सत्य उद्घाटित हुआ, जिसकी कल्पना भी मेरे लिए संभव नहीं थी। प्रायः कुछ ग्वाले ऐसे घरों में, जहाँ उनसे अधिक दूध लिया जाता है, गाय का आना सह नहीं पाते। अवसर मिलते ही वे गुड़ में लपेटकर सुई उसे खिलाकर उसकी असमय मृत्यु निश्चित कर देते हैं। गाय के मर जाने पर उन घरों में वे पुनः दूध देने लगते हैं। सुई की बात ज्ञात होते ही ग्वाल एक प्रकार से अन्तर्धान हो गया, अतः संदेह का विश्वास में बदल जाना स्वाभाविक था। वैसे उसकी उपस्थिति में कानूनी कार्यवाही के लिए आवश्यक प्रमाण जुटाना असम्भव था।

तब गौरा का मृत्यु से संघर्ष आरम्भ हुआ, जिसकी स्मृति-मात्र से आज भी मन सिहर उठता है। डॉक्टरों ने कहा, गाय को सेव का रस पिलाया जाए, तो सुई पर कैल्शियम जम जाने से उसके बचने की सम्भावना है। अतः नित्य कई-कई सेर सेवों का रस निकाला जाता और नली से गौरा को पिलाया जाता। शक्ति के लिए इंजेक्शन पर इंजेक्शन दिए जाते। पशुओं के इंजेक्शन के लिए सूजे के समान बहुत लम्बी मोटी सिरिन्ज तथा बड़ी बोतल भर दवा की आवश्यकता होती है। अतः वह इंजेक्शन भी अपने आप में 'शल्यक्रिया', जैसा यातनामय हो जाता था। पर गौरा अत्यन्त शान्ति से बाहर और भीतर, दोनों ओर की चुभन और पीड़ा सहती थी। केवल कभी-कभी उसकी सुन्दर पर उदास आँखें के कोनों में पानी की दो बूंदें झलकने लगती थी।

अब वह उठ नहीं पाती थी, परन्तु मेरे पास पहुँचते ही उसकी आँखों में प्रसन्नता की छाया-सी तैरने लगती थी। पास जाकर बैठने पर वह मेरे कन्धे पर अपना मुख रख देती थी और अपनी खुरदरी जीभ से मेरी गर्दन चाटने लगती थी।

लालमणि बेचारे को तो माँ की व्याधि और आसन्न मृत्यु का बोध नहीं था। उसे दूसरी गाय का दूध पिलाया जाता था, जो उसे रुचता नहीं था। वह तो अपनी माँ का दूध पीना और उससे खेलना चाहता था, अतः अवसर मिलते ही गौरा के पास पहुँचकर या अपना सिर मार-मार, उसे उठाना चाहता था या खेलने के लिए उसके चारों ओर उछल-कूद कर परिक्रमा ही देता रहता।

मैंने बहुत से जीव-जन्तु पाल रखे हैं, अतः उनमें से कुछ को समय-असमय विदा देनी ही पड़ती है। परन्तु ऐसी मर्मव्यथा का मुझे स्मरण नहीं है।

इतनी हृष्ट-पुष्ट, सुन्दर, दूध-सी उज्ज्वल पयस्विनी गाय अपने इतने सुंदर चंचल वत्स को छोड़कर किसी भी क्षण निर्जीव और निश्चेष्ट हो जाएगी, यह सोचकर ही आँसू आ जाते थे।

लखनऊ, कानपुर, आदि नगरों से भी पशु-विशेषज्ञों को बुलाया, स्थानीय पशु-चिकित्सक तो दिन में दो-तीन बार आते रहे परन्तु किसी ने ऐसा उपचार नहीं बताया, जिससे आशा की कोई किरण मिलती है। निरुपाय मृत्यु की प्रतीक्षा का मर्म वही जानता है, जिसे किसी असाध्य और मरणासन्न रोगी के पास बैठना पड़ा हो।

जब गौरा की सुन्दर चमकीली आँखें निष्प्रभ हो चली और सेव का रस कंठ में रुकने लगा, तब मैंने अन्त का अनुमान लगा लिया। अब मेरी एक इच्छा थी कि मैं उसके अंत समय उपस्थित रह सकूँ। दिन में ही नहीं; रात में भी कई-कई बार उठकर मैं उसे देखने जाती रही।

अन्त में एक दिन ब्रह्ममुहूर्त में चार बजे मैं गौरा को देखने गई, तब जैसे ही उसने अपना मुख सदा के समान मेरे कन्धे पर रखा, वैसे ही एकदम पत्थर जैसा भारी हो गया और मेरी बाँह पर सरककर धरती पर आ रहा। कदाचित् सुई ने हृदय को बेधकर बन्द कर दिया।

अपने पालित जीव-जन्तु के पार्थिव अवशेष मैं गंगा को समर्पित करती रही हूँ। गौरांगिनी को ले जाते समय मानो करुणा का समुद्र उमड़ आया, परन्तु लालमणि इसे भी खेल समझ उछलता-कूदता रहा। यदि दीर्घ नि:श्वास का शब्दों में अनुवाद हो सके, तो उसकी प्रतिध्वनि कहेगी, 'आह, मेरा गोपालक देश!'

अभ्यास

1. प्रस्तुत रेखाचित्र के अनुसार गौरा के शारीरिक सौन्दर्य और मृदुल स्वभाव का वर्णन कीजिए।
2. ग्वाले ने गाय को सुई क्यों और कैसे खिला दी ?
3. 'दूधो नहाओ' का आशीर्वाद किस प्रकार फलित हुआ ?
4. दूध दुहने की समस्या का स्थायी समाधान किस प्रकार निकाला गया ?
5. 'आह मेरा गोपालक देश' महादेवी ने नि:श्वास छोड़ते हुए ऐसा क्यों कहा ?
6. 'गौरा' रेखाचित्र के किस अंश ने आपको सर्वाधिक प्रभावित किया ? लिखिए।

योग्यता विस्तार

1. यदि आपके घर में कोई पालतू पशु है तो उसके साथ आपका क्या अनुभव है ? रेखाचित्र की भाषा में लिखिए।
2. महादेवी वर्मा ने अपने द्वारा पाले गए अनेक जीव-जंतुओं यथा- सोना, निक्की, रोजी, रानी, फ्लोरा के बारे में जो संस्मरण लिखे हैं, उन्हें पढ़िए और उनमें से जो आपको अधिक रोचक लगे, उसकी विशेषताएँ भित्तिपत्रिका पर प्रस्तुत कीजिए।

❋ ❋ ❋

अध्याय
3

गणेशशंकर विद्यार्थी

– भगवती चरण वर्मा

एक समय था, जब उत्तर भारत में, विशेष–रूप से उस उत्तर प्रदेश में, जो उन दिनों संयुक्त–प्रान्त के नाम से जाना जाता था, 'प्रताप' नाम के हिन्दी साप्ताहिक पत्र की धूम थी। भारतीय क्षितिज पर महात्मा गांधी के आविर्भाव के कुछ वर्ष पहले प्रताप का प्रकाशन कानपुर नगर से आरम्भ हुआ था। उसका प्रकाशन मध्यभारत से आए हुए एक नवयुवक ने आरम्भ किया था, जिसका नाम था गणेशशंकर विद्यार्थी।

गणेशशंकर विद्यार्थी – इस नाम के साथ मेरी स्मृतियाँ अचानक ही जाग उठती हैं। आज जो कुछ मैं हूँ, मेरी जीवन–धारा ने मेरे बाल्यकाल में मोड़ लिया। मैं सोच रहा हूँ कि क्या उसका समस्त न भी सही तो थोड़ा–बहुत लेकिन महत्वपूर्ण श्रेय गणेशशंकर विद्यार्थी को नहीं है ?

प्राय: सत्तावन–अट्ठावन वर्ष पहले की बात है। तब मैं 13–14 वर्ष का बालक था और मुझ पर कविता लिखने का पागलपन सवार हुआ था। मैं उन दिनों कानपुर नगर में रहता था और नियमित–रूप से 'प्रताप' पढ़ा करता था। उससे प्रेरणा ग्रहण करता था। 'प्रताप' में देशभक्ति के लेख छपते थे। देशभक्ति की कविताएँ छपती थीं। बाल्यकाल की प्राणशक्ति से उल्लसित एवं उच्छ्वसित कुतूहल से युक्त, मैं उन्हें पढ़ता था।

छन्दों का ज्ञान मुझे थोड़ा–बहुत हो गया था, मैंने एक कविता लिख डाली। यह बात सन् 1917 की है और उन दिनों मैं थियोसोफिकल स्कूल, कानपुर में आठवें दर्जे में पढ़ता था। स्वभावत: मेरे पास भाषा का अभाव था, शिल्प का ज्ञान नहीं था। अत्यन्त अनगढ़ कविता थी वह मेरी। लेकिन मेरे अन्दर प्रबल अभिलाषा थी कि मेरी वह कविता 'प्रताप' में छपे।

मैं कानपुर के पटकापुर मुहल्ले में रहता था। 'प्रताप' पत्र फीलखाना से निकलता था, जो पटकापुर से मिला हुआ था। मेरे घर से 'प्रताप' आफिस का फासला कुल तीन–चार फर्लांग का था। तो मैं अपनी वह कविता लेकर 'प्रताप' आफिस पहुँचा। 'प्रताप' आफिस में घुसते ही एक बड़ा–सा हॉल पड़ता था जिसमें उस समय चार–छह आदमी बैठे हुए काम कर रहे थे। एक व्यक्ति सम्भवत: अपने विचारों में खोया हुआ इधर–उधर टहल रहा था। दुबला–सा युवक, धोती और कमीज पहने हुए, मुख पर अधिकार की भावना। उस व्यक्ति को मैंने पहले भी देखा था, लोगों ने बतलाया था कि वह व्यक्ति गणेशशंकर विद्यार्थी है। उस व्यक्ति ने आगे बढ़कर मुझसे पूछा था, ''क्या काम है ?''

हिचकिचाते हुए मैंने उत्तर दिया था, ''मैं अपनी कविता 'प्रताप' में छपवाना चाहता हूँ।'' यह कहकर मैंने अपनी कविता उनके सामने बढ़ा दी।

उन्होंने हाल से लगे हुए एक कमरे की ओर इशारा करते हुए कहा था, ''उस कमरे में रमाशंकर अवस्थी बैठे हैं, उन्हें दे दो!'' और यह कहकर वह फिर अपने विचारों में खो गए थे।

श्री गणेशशंकर विद्यार्थी से वह मेरा प्रथम साक्षात्कार था, निहायत उखड़ा हुआ और रूखा–सा। करीब तीन–चार महीने बाद मेरे नाम से 'प्रताप' में एक कविता प्रकाशित हुई। भावना वही, छाप वही, लेकिन भाषा एक बार ही बदली

हुई। और मेरी प्रसन्नता का कोई ठिकाना नहीं!

उस कविता के प्रकाशन के दो-तीन महीने बाद मैं अपनी दूसरी कविता लेकर 'प्रताप' पहुँचा। हॉल में फिर गणेशशंकर विद्यार्थी से साक्षात्कार हुआ। उनका वही प्रश्न और मेरा वही उत्तर! इस बार उन्होंने मेरी कविता अपने हाथों में ले ली। उन्होंने उसे पढ़ा और मेरी पीठ ठोकते हुए कहा, ''शाबाश! बड़ी अच्छी कविता है। जाओ, छप जाएगी।'' और मैं प्रसन्न-मन चला आया।

तीसरे या चौथे सप्ताह वह कविता 'प्रताप' में प्रकाशित हुई। वैसी की वैसी, कहीं किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं। मैं कवियों की पंक्ति में आ गया था।

इसके दो-तीन साल के अन्दर ही मेरा परिचय कानपुर के सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' से हुआ। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' 'प्रताप' में आ गए थे। श्री रमाशंकर अवस्थी मुझसे उम्र में चार-पाँच वर्ष ही बड़े थे; और मैं इन लोगों के गुट में शामिल ही नहीं हुआ, बल्कि इस गुट का महत्वपूर्ण सदस्य भी बन गया था। श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के प्रोत्साहन से कानपुर में हिन्दी-साहित्य की एक नवीन धारा का आविर्भाव हो रहा था। हम सब अपने को 'प्रताप-परिवार' का सदस्य समझते थे, और हम सबके मानस-गुरु थे गणेशशंकर विद्यार्थी।

गणेशशंकर विद्यार्थी! वह कानपुर शहर के राजनीतिक जीवन के प्राण थे। अत्यन्त सरल और त्यागी, धन और वैभव से बहुत दूर। अपने दफ्तर के निकट ही तंग गली के एक छोटे-से मकान में वह अपने समस्त परिवार के साथ रहते थे, जबकि उनके नाम से बड़े-बड़े अफसर, रईस और पूँजीपति थर्राते थे। मझोले कद के दुबले-पतले आदमी, शक्ल से ही पता चल जाता था कि उनकी जिन्दगी अभावों से लड़ने में ही बीती है। लेकिन उनकी लेखनी में ओज, उनकी बानी में ओज, उनके समस्त व्यक्तित्व में ओज तथा प्राणों में कुलिश की कठोरता थी।

और सबसे बड़ी बात तो यह कि वह व्यक्ति अन्दर से साहित्यकार थे। उनसे प्रेरित होकर ही मैंने विक्टर ह्यूगो के उपन्यास उस कच्ची उम्र में ही पढ़ डाले थे। क्रान्तियों से सम्बद्ध साहित्य के वह विशेषज्ञ थे, विश्व की नवीन उभरती हुई धाराओं को वह स्वाभाविक रूप से आत्मसात कर लेते थे। सन् 1921-22 में ही मैंने उनके प्रभाव से कार्ल मार्क्स, मैक्स्वीनी एवं फ्रांस की राज्य क्रान्ति के प्रमुख व्यक्तियों पर लेख लिख डाले थे जो उन्हीं दिनों प्रताप प्रेस से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका 'प्रभा' में छपे थे। कविता के क्षेत्र से निकलकर मेरे गद्य-साहित्य के क्षेत्र को अपनाने का श्रेय मूल रुप से गणेशशंकर विद्यार्थी को है। उन्होंने ह्यूगो के दो-एक उपन्यासों का स्वयं अनुवाद किया था जो आज तक प्रकाशित नहीं हो सका और जो सम्भवत: अब नष्ट भी हो गया है।

उस समय मेरे ऊपर गणेशशंकर विद्यार्थी का एक आतंक-सा था। जन-जीवन को आलोड़ित करनेवाले, सरकार को हिला देनेवाले वह अन्दर से बहुत सरल और भोले थे। अति गम्भीर दिखने वाले व्यक्तित्व में गजब की विनोदप्रियता भी थी! मुझे याद है कानपुर के फूलबाग की वह सभा, जिसमें उन दिनों के एक सुप्रसिद्ध नेता कर्मवीर सुन्दरलाल का भाषण हो रहा था। गणेशशंकर विद्यार्थी उस सभा में एक साधारण दर्शक की भाँति एक किनारे खड़े थे, उनके साथ थे बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', मैं और दो-एक अन्य व्यक्ति। सुन्दरलाल जी का भाषण बड़ा ओजपूर्ण था जब सुन्दरलालजी अपने भाषण के एक अंश पर आए। गणेशजी ने (हम लोग उन्हें हमेशा गणेशजी कहते थे) मुस्कराते हुए कहा, ''अब सुन्दरलालजी रोने लगेंगे!'' यह कहकर वह थोड़ा-सा पीछे हटे। और तभी सुन्दरलालजी बिलख-बिलखकर रोने लगे।

जो कुछ मैं आज हूँ, वह मेरी आन्तरिक प्रवृत्तियों की उपज तो अवश्य है, लेकिन उसके विशिष्ट रूप ग्रहण करने

में बाह्य परिस्थितियों का बहुत बड़ा योगदान है। यदि मैं बाल्यकाल में ही गणेशशंकर विद्यार्थी के सम्पर्क में न आ गया होता, तो मैं कोई दूसरा ही व्यक्ति होता, मुझे यह अनुभव हो रहा है। यह न झुकने और दबने की प्रवृत्ति, यह दूसरों पर सरल-सहज विश्वास, यह जिसे मैं सत्य और न्याय समझता हूँ उस पर अडिग आस्था, जिन्हें मैं जीवन-भर ढोने का प्रयत्न करता रहा हूँ, ऐसा लगता है कि मुझे यह सब उनसे ही विरासत के रूप में मिले हैं। वैसे उनका घनिष्ठ मित्र या प्रिय शिष्य बन सकना तो मेरे लिए सम्भव न था। राजनीति में मेरे लिए आ सकना भी सम्भव न था जबकि गणेश शंकर विद्यार्थीजी ने अपने अन्दरवाले साहित्य और कला को तिलांजलि देकर राजनीति के क्षेत्र को पूरी तरह अपना लिया था; फिर भी मुझे लगता है कि मेरे निर्माण में उनका बहुत बड़ा प्रभाव रहा है, मेरे अनजाने ही।

आज जब मैं अपने बीते हुए जीवन का विवेचन करता हूँ, तब मुझे लगता है कि गणेश शंकरजी मुझे हर तरह की सहायता करने के लिए तत्पर रहते थे। यह बात दूसरी है कि अपनी आन्तरिक प्रवृत्ति के कारण मैंने ही उनके सामने हाथ नहीं फैलाया। इसके प्रमाण में मैं एक घटना का उल्लेख करने का लोभ संवरण न कर सकूँगा।

सन् 1924 में मैंने इन्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण की। तब मेरे सामने विश्वविद्यालय में प्रवेश करने का प्रश्न आया। कानपुर में जो डिग्री कॉलेज थे, वे प्रान्तीय सरकार की नई शिक्षा-पद्धति के कारण तोड़ दिए गए थे, स्नातक और स्नातकोत्तर शिक्षा केवल विश्वविद्यालयों में सीमित कर दी गई थी। संयुक्त प्रान्त में उन दिनों चार विश्वविद्यालय थे। सबसे प्राचीन विश्वविद्यालय इलाहाबाद विश्वविद्यालय था, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थापित होकर महत्वपूर्ण बन चुका था। मेरी आर्थिक अवस्था इतनी अच्छी नहीं थी कि मैं आसानी से कानपुर के बाहर जाकर किसी विश्वविद्यालय में प्रवेश ले सकूँ। गणेश शंकरजी ने मुझे काशी विश्वविद्यालय में प्रवेश लेने की सलाह दी, क्योंकि वहाँ कुछ ऊपरी काम मिल जाने की सम्भावना थी। राय कृष्णदास उन दिनों बनारस के प्रभावशाली रईस समझे जाते थे, गणेशजी की उनसे मित्रता थी। सम्भवत: 'प्रताप' के प्रकाशन में वह गणेशजी के सहायक भी थे। उन्होंने राय साहब के नाम व्यक्तिगत पत्र देकर मुझे काशी भेजा था। यह बात दूसरी है कि किन्हीं कारणों से काशी में बात नहीं बनी और मैंने प्रयाग विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया।

मध्यभारत के एक बहुत साधारण मध्यवर्गीय कायस्थ परिवार में श्री गणेश शंकर विद्यार्थी का जन्म हुआ था। देश के अन्य महान् नेताओं की भाँति वह पारिवारिक चिन्ताओं से मुक्त नहीं थे, शायद वह मेरी ही भाँति परिस्थितियों से विवश एवं संघर्षरत थे। उनमें उमंग और उत्साह था, महत्वाकांक्षाएँ थीं और सम्भवत: इसलिए वह कानपुर आए थे। वहाँ उन्हें दो सहयोगी मिल गए थे, श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा और पण्डित शिवनारायण मिश्र। आज कानपुरवाले भी इन दोनों के नाम भूल-से गए हैं, लेकिन अपने जीवनकाल में यह दोनों कानपुर के नागरिक जीवन की महत्वपूर्ण हस्तियाँ थीं। गणेश शंकर विद्यार्थी के समुदाय में इन दोनों का बहुत बड़ा हाथ था। और इन तीन आदमियों ने 'प्रताप' की स्थापना की थी, वैसे सक्रिय रूप से 'प्रताप' में गणेश शंकर विद्यार्थी का ही स्थान था। बाद में कुछ मतभेदों के कारण श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा 'प्रताप' से अलग हो गए थे।

कानपुर औद्योगिक नगर है, अनगिनत मिलें वहाँ धुआँ उगलती रहती हैं। गुलामी के काल में उस अंचल में रहनेवाले हजारों भूखे व्यक्ति रोजी कमाने के लिए कानपुर की ओर भागते थे। उस समय कानपुर की प्रमुख समस्या मजदूरों की समस्या थी। समाजवाद का नाम तो लोगों को मालूम नहीं था, वह नाम तो रूस की राज्यक्रान्ति के बाद ही

लोगों को मालूम हुआ, लेकिन समाजवाद की भावना से गणेशजी अवश्य प्रेरित थे और उन्होंने मजदूरों के संगठन का काम भी अपने ऊपर ले लिया था।

समस्त देश की सुस्पष्ट समस्या अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति पाने की थी। उस गुलामी को दूर करने के लिए क्रांतिकारियों का एक छोटा-सा किन्तु महत्वपूर्ण दल भी अपने प्राणों की बाजी लगाकर काम कर रहा था। उस दल को पैसों के लिए कानपुर का मुँह देखना पड़ता था जो प्रान्त का औद्योगिक एवं व्यापारिक केन्द्र था। वे क्रान्तिकारी गणेश शंकर विद्यार्थी की शरण में आते थे, क्योंकि वह कानपुर के प्रमुख नेता थे और दूसरों से माँग-जाँचकर तथा प्राय: अपना ही पेट काटकर वह उन क्रांतिकारियों को आर्थिक सहायता देते थे।

आज मैं सोच रहा हूँ कितनी बला की प्राणशक्ति थी उनमें। 'प्रताप' भारतवर्ष का एक अति शक्तिशाली साप्ताहिक पत्र बन गया था, श्री गणेश शंकर उस पत्र के सम्पादक एवं संचालक दोनों ही थे। तो उस पत्र का सम्पादन एवं संचालन करना, मजदूरों के संगठन में पूरी तरह अपने को झोंक देना, क्रान्तिकारियों की जी तोड़ सहायता करना और अनेक आन्दोलनों में भाग लेकर जेल जाना आदि कार्य उनकी इसी प्राण शक्ति के प्रमाण थे।

एक धुँधली-सी याद मुझे संयुक्त प्रान्त की कौंसिल के उस चुनाव की है जिसमें कांग्रेस हाई-कमान ने गणेशजी को कानपुर के अत्यन्त सम्पन्न और प्रभावशाली पूँजीपति के मुकाबले खड़ा कर दिया था। कहा जाता है कि उन पूँजीपति महोदय ने उस चुनाव में ढाई-तीन लाख रुपये खर्च किए थे। आज वे ढाई-लाख रुपये पच्चीस लाख के बराबर हैं। और गणेशशंकर विद्यार्थी उनसे करीब एक लाख वोटों से जीते थे। जनता का अडिग विश्वास था उनके ऊपर!

अभ्यास

1. भगवती चरण वर्मा का प्रथम परिचय गणेशशंकर विद्यार्थीजी से कब और कैसे हुआ ?
2. कानपुर में किन-किन साहित्यकारों से भगवती चरण वर्मा की मित्रता हुई ?
3. गणेशशंकर विद्यार्थीजी के व्यक्तित्व की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. भगवतीचरण वर्मा ने गणेशशंकरजी से प्रभावित होकर किस प्रकार का साहित्य पढ़ा और लेख लिखे ?
5. विद्यार्थीजी पत्रकारिता के अतिरिक्त किन-किन गतिविधियों में सक्रिय थे ?

योग्यता विस्तार :-

1. ''प्रताप'' ''प्रभा'' तथा उस युग के अन्य समाचार पत्रों व पत्रिकाओं को संग्रहालयों एवं पुस्तकालयों में जाकर देखिए तथा उनके महत्व को समझिए।
2. ''सामाजिक परिवर्तन में पत्रकारिता की महत्वपूर्ण भूमिका'' - इस विषय पर एक लघु निबन्ध लिखिए।
3. गणेशशंकर विद्यार्थीजी के जीवन से जुड़ी घटनाओं को अपनी डायरी में लिखिए।

❋ ❋ ❋

अध्याय
4

मेरे जीवन के कुछ चित्र

– डॉ. रामकुमार वर्मा

जब मैं अपने जीवन के प्राचीन पृष्ठ उलटता हूँ तो सबसे प्रमुख पृष्ठ पर पूज्य माता जी का चित्र आता है– श्रीमती राजरानी देवी का– जिन्होंने मेरे जीवन की रूप-रेखा अपने कलापूर्ण हाथों से खींची। वे संगीतज्ञ थीं और काव्य-ज्ञान से पूर्ण। आज भी उनका संगीत-स्वर मेरे कानों में गूँज जाता है। वे ऊषा-काल में उठकर राग विभास के स्वरों में 'भोरभयो जागहु रघुनन्दन' तन्मयता से गाती थीं और हम लोग उठकर उन्हें घेरकर बैठ जाया करते थे। मुझसे भी वे गाने को कहतीं और ठीक गाने पर नाश्ते में एक जलेबी अधिक देने का पुरस्कार घोषित करतीं। वह मेरे जीवन का पहला पुरस्कार था, जो मेरे लिए 'देव पुरस्कार' से भी अधिक मूल्यवान है।

उनके काव्य-ज्ञान का प्रभाव मेरे सबसे बड़े भाई श्रीरघुवीरप्रसादजी पर भी पड़ा था, जो ब्रजभाषा में कविता लिखने की रुचि रखते थे। मेरी माताजी खड़ी बोली को देश-भाषा मानती थीं और उसी में कविता लिखने को कहती थीं, यद्यपि ब्रजभाषा भी उन्हें प्रिय थी। मैंने खड़ी बोली पसन्द की। जब मैं कविता लिखकर मात्राएँ गिना करता था तो उन्होंने कहा– ''बच्चे, मात्रा गिनेगा या भाव लिखेगा ?'' उन्होंने प्रत्येक छन्द के लिए एक-एक राग निर्धारित कर उसी राग के स्वर में कविताएँ लिखने को कहा जिससे मात्राओं में कभी भूल न हो सकी। उनके द्वारा सिखलाए हुए छन्दों की अलग-अलग तानें मुझे आज भी याद हैं। किन्तु वे नहीं हैं।

बचपन से 'प्रतियोगिता' मुझे विशेष प्रिय रही। कुश्ती लड़ने में, नाटक में, अभिनय करने में और पढ़ने में मेरी विशेष रुचि रही। कुश्ती की प्रतियोगिता तो ऐसी थी कि नागपंचमी के दिन अखाड़े में मैंने अपनी 'दूनी जोड़' को साफ जमीन पर दे मारा और 'चित्त' कर दिया। वे महाशय उस दिन 'फुल्लम' (सर्व विजयी) थे और अखाड़े में दोनों हाथों से सलाम करके बैठकों-पर-बैठकें लगा रहे थे। कहते थे, ''कोई रुस्तुम (रुस्तम) आ जाए।'' मैं पिताजी के साथ तमाशा देख रहा था। मैं भी कुश्ती लड़ता था, पिताजी के सामने अपनी अवहेलना न देख सका। मैंने ललकार दिया– ''चला आ पट्ठे।'' और अखाड़े की धूल से हाथ मलते हुए उससे हाथ मिलाया और ''बोल बजरंग'' कहकर भिड़ गया। 4 मिनट 17 सैकिंड में मैंने उस पर सवार होकर उसे 'चित्त' कर दिया। तालियों के बीच आकर शेरवानी और पुरस्कार लेकर उसी 'फुल्लम' को दे दिया।

अभिनय में तो मैं 'श्रीकृष्ण' के अभिनय का विशेषज्ञ रहा। बाँसुरी कई दिनों तक हाथ से न छूटी। कर्नलगंज में एक रोज अपने मकान के सामने बजा रहा था तो मेरे एक मित्र ने पिताजी से शिकायत कर दी कि ''तुम्हारे सपूत बाजार में बाँसुरी बजाते फिरते हैं।'' तब से बाँसुरी छूट गई। कृष्ण के अभिनय में मुझे बहुत से पुरस्कार मिले। यहाँ तक कि कृष्ण का अभिनय करने के लिए मुझे अपना स्कूल और शहर छोड़कर दूसरे स्कूलों में पार्ट करने जाना पड़ता था। सिहोरा स्कूल के हेडमास्टर पं. धनीराम पाण्डेय तो मुझे कृष्णजी कहकर ही पुकारा करते थे। कृष्ण के सिवाय दो पार्ट और खेले। एक तो 'शिवाजी' में 'सूर्याजी' का और 'परिवर्तन' में 'श्यामलाल' का। लेकिन ये पार्ट कुछ मुझे जँचे नहीं। अन्तिम अभिनय नरसिंहपुर में मराठा सरदार 'सूर्याजी' का ही रहा। 'सोफिया' में प्रेमाभिनय था। मेरी बड़ी बहन भी

नाटक देखने गई थीं। उन्होंने आकर मेरे प्रेमाभिनय पर मुझे बहुत 'बुरा-भला' कहा। मैंने कहा- ''लो अब अभिनय न करूँगा।'' उन्होंने कहा- ''अपने श्रीकृष्ण का करो ना ?'' मैंने कहा, ''अब मैं श्रीकृष्ण से बहुत 'बड़ा' हो गया। खतम करो।''

पढ़ने में कभी पीछे नहीं रहा, फेल होने का अनुभव मुझे कभी नहीं हुआ। सदैव 'डिवीजन' में पास हुआ। माताजी ने कहा था- ''कुमार, पढ़ने में पहले दर्जे का ध्यान रखना, जैसे अर्जुन ने चिड़िया के केवल आँख पर ध्यान रखा था।'' मैंने कहा- ''तो मुझे अर्जुन बनाना चाहती हो ?'' उन्होंने कहा- ''कर्ण बनाऊँ ?'' और मेरे कान खींचे। जब मैंने एम.ए. प्रथम श्रेणी में सर्व प्रथम स्थान पाकर पास किया तब वे संसार से चली गई थीं। उनका आदर्श पाकर भी जैसे मैं नहीं पा सका। अपनी सफलता का समारोह मैंने आँसुओं से मनाया था।

कविता कैसे लिखी ? सुनिए। सिहोरा (जबलपुर) स्कूल में मेरे एक पंडितजी थे। उनका नाम था पं. विश्वम्भरप्रसादजी गौतम विशारद। वे प्रयाग से प्रकाशित होने वाले पं. रामजीलाल शर्मा के 'विद्यार्थी' नामक मासिक पत्र में लिखा करते थे। अपनी कविताओं की नकल भी मुझसे कराते थे। घर पर माताजी का 'काव्य-प्रेम' और स्कूल में पंडितजी का 'विद्यार्थी'। मैंने सोचा- 'मैं भी कविता लिखूँगा।' उस समय मैं मिडिल क्लास में पढ़ता था। परीक्षा सिर पर सवार थी। पढ़ने की रात-दिन चिन्ता। मैंने अपनी कापी पर लिखा-

ईश्वर मुझको पास कराओ अब।

और फिर माताजी द्वारा दिए हुए नाश्ते की जलेबियों की याद करके लिखा-

और मिठाई खूब-सी खाओ तब॥

मैंने अपनी पंक्तियों में 'अब' और 'तब' इसीलिए अन्त में जोड़ा था कि मैं तुलसीदासजी की चौपाई का चोर न समझा जाऊँ। माताजी ने कहा- ''अब' और 'तब' काट दो।'' मैंने कहा- ''क्या चाहती हो कि मैं तुलसीदास की चोरी करूँ।'' उन्होंने हँसकर कहा था- ''छन्द की चोरी-चोरी नहीं है।'' लेकिन अपना मन रखने के लिए मैंने 'अब' और 'तब' रहने दिया।

असहयोग आन्दोलन में मैंने भाग लिया। तब पिताजी मंडला (सी.पी.) में ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर थे। मैं नरसिंहपुर में था। सन् 1921 की बात है। नागपुर-कांग्रेस ने असहयोग-आन्दोलन का प्रस्ताव पास किया था। शौकतअली ने नरसिंहपुर आकर स्कूल छोड़ने के लिए कहा। मैंने सभा से उठकर ही प्रण किया कि मैंने स्कूल छोड़ दिया। तब मैं दसवें दर्जे में था। 6/ स्कॉलरशिप मिलता था और क्लास में प्रथम आने के कारण मॉनीटर था। पिताजी मंडला से आए। मेरे भविष्य की 'ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नरी' का चित्र खींच कर उन्होंने पुनः स्कूल जाने को कहा। मैं नहीं गया, वे नाराज हुए। मैंने कहा- ''आपकी कोर्ट में आऊँ तो मुझे आजीवन कारावास दीजिए।'' उन्होंने कहा- ''अभी लो'' और अपना बेत मँगवाया। मैंने 72 घंटे का उपवास किया और स्कूल जाने से बच गया। उन दिनों जुलूस राष्ट्रीय झंडे को लेकर निकलता था। गाने के लिए नए-नए गीतों की आवश्यकता पड़ती। मैंने लिखा था-

''नहीं डरेंगे नहीं डरेंगे तोपों से तलवारों से।
नही डरेंगे लेश-मात्र भी भीषण कारागारों से॥''

उसी समय 'देश-सेवा' कविता के लिए कानपुर के श्री बेणीमाधव खन्ना की 51/- पुरस्कार वाली घोषणा निकली। पिताजी आए हुए थे उन्होंने मुझसे व्यंग्य में कहलाया- ''छोटे गांधीजी से कहो देश-सेवा पर कविता लिखें।'' मैंने कहा- ''पिताजी की आज्ञा से लिखूँगा, सफलता मिले चाहे न मिले। इस समय इनकी आज्ञा न्याय-युक्त है, पिछली बार नहीं थी।'' मैंने बिना किसी को बतलाए कविता लिखकर भेज दी। मेरे बड़े भाई ने कविता देखने की इच्छा प्रकट की। मैंने कहा- ''संशोधन न कीजिएगा।'' उन्होंने पूछा- ''क्यों ?'' मैंने कहा- ''यदि पुरस्कार मुझे मिला तो सारा श्रेय आप लेंगे।'' उन्होंने कहा - ''आहा, जैसे पुरस्कार जनाब को मिल ही जाएगा।''

तीन महीने बाद सूचना मिली कि मुझे पुरस्कार मिल गया। मैं माताजी के पास आया तो उन्होंने कहा था- ''मुझे गर्व है कि मेरा एक लड़का देश-सेवा में तन-मन से काम कर रहा है।'' मुझे याद है उस दिन पिताजी ने मेरे लिए खद्दर का एक कोट बनवाया था।

आज न पिताजी हैं और न माताजी। ये कहानियाँ भी भूलती जा रही हैं। आज आपके अनुरोध ने मुझे बीती बातें याद करा दी हैं। उस जीवन और इस जीवन में कोई साम्य नहीं।

अभ्यास

1. डॉ. रामकुमार वर्मा सबसे पहले अपनी माता का स्मरण क्यों करते हैं? उनकी माता की दिनचर्या लिखिए।
2. बचपन में लेखक किस पात्र के अभिनय के विशेषज्ञ थे ? इस अभिनय का प्रभाव उन पर कितने समय तक बना रहा ?
3. नागपंचमी के दिन घटित अखाड़े की घटना का वर्णन अपने शब्दों में लिखिए।
4. माँ ने रामकुमार वर्मा को पढ़ाई के सम्बन्ध में क्या निर्देश दिए थे ?
5. लेखक ने स्कूल जाना क्यों छोड़ा ?
6. लेखक ने 'देश सेवा' कविता किन परिस्थितियों में लिखी ? और उसका क्या परिणाम हुआ ?

योग्यता विस्तार

1. अपने बचपन के अनुभवों का स्मरण कीजिए और कुछ घटनाओं का उल्लेख करते हुए (आत्मकथात्मक शैली में) अपनी कापी में लिखिए।
2. ''देशप्रेम ही सच्चा प्रेम हैं''- इस विषय पर लगभग आठ पंक्तियों की कविता लिखने का प्रयत्न कीजिए।
3. जीवन में पहला पुरस्कार मिलना सदैव याद रहता है। आपको कभी पुरस्कार मिला है ? क्या पुरस्कार मिलना प्रोत्साहन का पर्याय है ? इस विषय पर कक्षा में परिचर्चा कीजिए।

❋ ❋ ❋

अध्याय
5

नैनो टेक्नोलॉजी

– संकलित

प्रोद्यौगिकी में नैनो टेक्नोलॉजी को एक नए युग के सूत्रपात के रूप में देखा जा रहा है। नैनो टेक्नोलॉजी अतिसूक्ष्म दुनिया है, जिसका दायरा एक मीटर के अरबवें हिस्से या उससे भी छोटा है। चौंकाने वाली बात यह है कि जितनी ज्यादा यह सूक्ष्म है उतनी ही ज्यादा संभावनाएँ अपने में समेटे हुए है। नैनो टेक्नोलॉजी से बने अनूठे उत्पादों का दायरा लगातार बढ़ता जा रहा है।

नैनो टेक्नोलॉजी शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के शब्द नैनों से हुई है जिसका सीधा अर्थ होता है बौना या सूक्ष्म। यह नाम जापान के वैज्ञानिक नौरिया तानीगूगूची ने वर्ष 1976 में दिया था। वर्ष 1986 में नैनो टेक्नोलॉजी के प्रति वैज्ञानिक वर्ग की रुचि उस समय अचानक बढ़ गई जब जर्मनी के वैज्ञानिक गार्ड बिनिग व स्विटजरलैंड के हैनरिच रोरर के संयुक्त प्रयास से तैयार 'स्कैनिंग टानलिंग माइक्रोस्कोप' बना। यह वही माइक्रोस्कोप था जिसकी मदद से वैज्ञानिक पहली बार अणु व परमाणु को सहजता से देख पाए। इस आविष्कार के लिए इन वैज्ञानिकों को नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। नैनो टेक्नोलॉजी एक यूनिट है जो एक मीटर के अरबवें हिस्से के बराबर होता है। एक से लेकर सौ नैनोमीटर को 'नैनोडोमेन' कहा जाता है। जब अणु और परमाणु नैनो क्षेत्र को प्रभावित करते हैं तो इनमें नवीन तब्दीलियाँ होनी आरंभ हो जाती हैं। ये तब्दीलियाँ अद्‌भुत होती हैं, जिसमें वस्तु के मूल गुण तक बदल जाते हैं। इस बदलाव की तकनीक को ही नैनो टेक्नोलॉजी कहा जाता है।

नैनो टेक्नोलॉजी के तहत मटेरियल का साइज छोटा कर उसे नैनोडोमेन बना लिया जाता है। ऐसा करने पर उस पदार्थ के गुण – इलेक्ट्रिकल, मैकेनिकल, थर्मल व ऑप्टीकल – हर स्तर पर बदलना शुरु हो जाते हैं। यह एक नया विज्ञान है जो कि बेहद आश्चर्यचकित कर देने वाले परिणाम देता है। जैसे-जैसे परमाणु का साइज छोटा होगा, उसके अंदर दूसरी धातुओं व पदार्थों में आपसी प्रतिक्रिया की क्षमता बढ़ जाएगी। इस विशेषता का इस्तेमाल कर नैनो मटेरियल से एकदम नया उत्पाद आसानी से तैयार किया जा सकता है। नैनो मटेरियल तैयार करने के लिए हमेशा दो पद्धतियों का इस्तेमाल किया जाता है – पहली बड़े से छोटा करने की पद्धति और दूसरी छोटे से बड़े करने की तकनीक। इस तकनीक की मदद से एक आश्चर्यचकित कर देने वाला नैनो मटेरियल तैयार किया जा सकता है। अगर देखा जाए तो संसार की हर चीज का निर्माण अणु से हुआ है। हर वस्तु की प्रकृति अब अणु के साथ जुड़ी विभिन्न रासायनिक वस्तुओं की प्रकृति पर निर्भर करती है। यह प्रकृति बार-बार बदल सकती है, बस जरूरत है तो आपसी प्रतिक्रिया में कुछ मामूली फेरबदल करने की। नैनो पदार्थ अणु से भी बहुत छोटा होता है इसलिए इसकी आकर्षण क्षमता कहीं अधिक ज्यादा होना स्वाभाविक है। यही वजह है कि नैनो मटेरियल बेहद हल्के, मजबूत, पारदर्शी एवं अपने मूल मटेरियल से पूरी तरह से अलग होते हैं। एक नैनो मीटर का साइज मानव बाल के 50 हजारवें हिस्से के बराबर होता है।

- **नैनौ टेक्नोलॉजी की उपयोगिता :** अमेरिका के बाजारों में पैठ बना लेने के पश्चात् अब नैनो टेक्नोलॉजी ने

भारतीय बाजार पर भी कब्जा जमाना शुरू कर दिया है। हालांकि अभी भारतीय बाजारों में नैनो उत्पादों की संख्या बहुत कम है मगर वह दिन दूर नहीं जब यहाँ भी नैनो टेक्नोलॉजी के उत्पादों का बोलबाला होगा। भारतीय विशेषज्ञ भी अब इस क्षेत्र में शोध करने में जुट गए हैं। फिलहाल अगर देखा जाए तो नैनो टेक्नोलॉजी चिकित्सा के क्षेत्र से लेकर उद्यागों तक कहीं न कहीं अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है।

- **चिकित्सा क्षेत्र** – नैनौ टेक्नोलॉजी का वर्तमान समय में सर्वाधिक प्रभाव चिकित्सा के क्षेत्र में ही देखने को मिल रहा है। वैज्ञानिक इस तकनीक का इस्तेमाल कर गोल्ड पार्टिकल बैक्टीरिया ट्यूमर सेल्स का निर्माण कर रहे हैं, जो कैंसर की समूची प्रक्रिया को ही बदल देगी। इससे ट्यूमर के खतरनाक तत्व को ही खत्म कर दिया जाता है। इसके अलावा विशेषज्ञ ऐसी कलाई घड़ी के रूप में नैनो टेक्नोलॉजी आधारित डिवाइस का विकास करने में लगे हैं, जिसके माध्यम से आप सहज ही अपने शरीर की तमाम बीमारियों का पता लगा पाएँगे। रोग उत्पन्न होते ही उसका पता लग जाने और इलाज हो जाने से व्यक्ति की औसत आयु में वृद्धि होना स्वाभाविक है।

- **कम्प्यूटर के क्षेत्र में** – इस पद्धति का प्रभाव कम्प्यूटर के क्षेत्र में काफी क्रांतिकारी बदलाव लाया है। सुपर कम्प्यूटर का नाम तो सभी ने सुना होगा। यह इसी नैनो टेक्नोलॉजी का ही परिणाम है। बस इसके लिए आपको कम्प्यूटर में कनेक्टर के रूप में नैनोवायर का इस्तेमाल करना होता है। इस वायर के लगते ही कम्प्यूटर की मेमोरी 10 लाख गुना बढ़ जाती है। साथ ही इस तकनीक का इस्तेमाल अब कम्प्यूटर चिप के सर्किट निर्माण में किया जाने लगा है, जो कि अन्य चिप्स के मुकाबले अधिक अच्छे परिणाम देता हैं। इस तकनीक के उदय से कम्प्यूटर विज्ञान को एक नई गति मिली है।

- **उद्योग में** – इस क्षेत्र में भी यह तकनीक अपनी पैठ बनाती जा रही है जैसे टिटेनियम डाई–ऑक्साइड पेंट। यदि इसे नैनो मटेरियल बनाकर पेंट में मिला दिया जाए तो उसकी चमक और हार्डनेस और बढ़ जाएगी। इस तरह तैयार पेंट अन्य सामान्य पेंट के मुकाबले ज्यादा दिन चलता है। इसके अलावा कपड़ा उद्योग में भी इस पद्धति का इस्तेमाल कर नैनोबेस्ड क्लॉथ बनाए जा रहे हैं। इस तकनीक से तैयार कपड़े पसीना आसानी से सोख लेते हैं। इतना ही नहीं, यह कपड़ा बाजार में उपलब्ध अन्य कपड़ों के मुकाबले कहीं अधिक टिकाऊ है।

- **जल शोधन में** – नैनो टेक्नोलॉजी के माध्यम से पानी में मौजूद हानिकारक आर्सेनिक तत्व समाप्त कर दिया जाता है या एकत्र कर निकाल दिया जाता है। इसके लिए नैनो मिनरल, नैनो गोल्ड, नैनो सिल्वर व नाईट्रेट का प्रयोग किया जाता है।

- **टी.वी. डिसप्ले में** – टेलीविजन पर नजर आने वाली पिक्चर की ब्राइटनेस व कंट्रास्ट को बेहतर बनाने के लिए नैनो टेक्नोलॉजी का प्रयोग किया जाता है। इस पद्धति में नैनो फास्टर मटेरियल का इस्तेमाल किया जाता है। इसके अलावा भी सौन्दर्य प्रसाधन, कॉपर वायर निर्माण व प्रदूषण नियंत्रण के क्षेत्र में नैनो टेक्नोलॉजी के अद्‌भुत प्रयासों की धूम है। यह ऐसी तकनीक है जो कि नए युग की शुरूआत का कारण बनेगी।

- **योग्यता प्राप्ति** – भारत में नैनो टेक्नोलॉजी के शिक्षण–प्रशिक्षण में अभी बहुत कम निजी व सरकारी संस्थान आगे आए हैं। अगर भारत की बात की जाए तो नैनो टेक्नोलॉजी से संबंधित केवल एम.टेक नैनो टेक्नोलॉजी पाठ्यक्रम ही उपलब्ध है जिसके लिए निर्धारित योग्यता इंजीनियरिंग की डिग्री या स्नातकोत्तर डिग्री (फिजिक्स,

कैमेस्ट्री, बायोटेक्नोलॉजी) अनिवार्य है। एम.टेक प्रोग्राम दो वर्ष का है जिसमें प्रशिक्षुओं को 6 माह का प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जाता है। इस तकनीकी के तेजी से हो रहे विकास को देखते हुए जल्द ही भारतीय विश्वविद्यालयों व संस्थानों में नैनो टेक्नोलॉजी से संबंधित पाठ्यक्रम पढ़ाए जाने लगेंगे।

अभ्यास

1. नैनो टेक्नोलॉजी क्या है ? इनके क्षेत्र-विस्तार के बारे में सम्भावनाएँ बतलाइए।
2. ''नैनोडोमेन'' की निर्माण प्रक्रिया समझाते हुए उसके आश्चर्यजनक परिणाम लिखिए।
3. नैनो मटेरियल किसे कहते हैं ? नैनो मटेरियल तैयार करने की दो पद्धतियाँ कौन-कौन सी हैं ?
4. चिकित्सा क्षेत्र में नैनो टेक्नोलॉजी की उपयोगिता बताइए।
5. ''सुपर कम्प्यूटर नैनो टेक्नोलॉजी का ही परिणाम है।'' - समझाइए।
6. निम्नलिखित क्षेत्रों में नैनो टेक्नोलॉजी की उपयोगिता बतलाइए-
   1. पेंट
   2. कपड़ा
   3. जल-शोधन
   4. टी.वी. डिसप्ले
7. भारत में नैनो टेक्नोलॉजी के शिक्षण-प्रशिक्षण की उपलब्धता पर प्रकाश डालिए।

योग्यता विस्तार

1. विज्ञान के किस क्षेत्र में आपकी रुचि है ? उस क्षेत्र की नवीनतम खोजों के बारे में जानकारी एकत्र कीजिए।
2. विज्ञान-पत्रिकाओं के दो अथवा तीन नाम बताइए। किसी एक विज्ञान पत्रिका के वार्षिक ग्राहक बनिए।
3. नैनो टेक्नोलॉजी अथवा कम्प्यूटर साइंस के किसी विशेषज्ञ का भाषण अपने विद्यालय में आयोजित करने हेतु अपने प्राचार्य से आग्रह कीजिए।
4. अपने प्रदेश में नैनो टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में हो रहे कार्यों एवं प्रशिक्षणों की जानकारी एकत्र कीजिए।

❋ ❋ ❋

अध्याय
6

'उनको पुकारता हूँ'

उनको पुकारता हूँ।
जिनका लहू अभी तक
पानी नहीं हुआ है,
संसार में कि जिनका -
सानी नहीं हुआ है,
पीते सदा ज़हर जो,
मिटकर अजर-अमर जो,
संग्राम की घड़ी में उनको पुकारता हूँ।

गरजें घनी-घटा-से,
टूटें प्रबल प्रलय से,
आँधी बनें बहें जो,
भाँवर भरे विजय से,
संघर्ष प्यार जिनका,
पावक सिंगार जिनका,
संग्राम की घड़ी में उनको पुकारता हूँ।

यश की उमर जियें जो,
ऐसे सपूत जागें,
रागी स्वतंत्रता के,
वे मुक्ति-दूत जागें,
सोया न मान जिनका,
चेरा विहान जिनका,
संग्राम की घड़ी में, उनको पुकारता हूँ।

– आनन्द मिश्र

अभ्यास

1. 'लहू के पानी होने' से कवि का क्या तात्पर्य है ?
2. 'मिटकर अजर-अमर जो' कहकर कवि किन लोगों की ओर संकेत कर रहा है ?
3. विजय से भाँवर भरने की क्षमता किसमें होती है ?
4. 'पावक' से शृंगार कौन करता है ?
5. कवि किन सपूतों को जागरण का संदेश देना चाह रहा है ?
6. 'मुक्ति-दूत' से कवि का क्या तात्पर्य है ? स्पष्ट कीजिए।
7. 'सोया न मान जिनका, चेरा विहान जिनका' इस पंक्ति का भावार्थ लिखिए।
8. 'उनको पुकारता हूँ' कविता का केन्द्रीय भाव लिखिए।

योग्यता विस्तार

1. 'उनको पुकारता हूँ' कविता राष्ट्रभक्ति-भावना से ओत-प्रोत है, इसी विचार-धारा की कुछ अन्य कविताओं का सस्वर पाठ कीजिए।
2. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता-संग्राम सेनानियों की जीवनी पर स्वराज भवन-भोपाल द्वारा प्रकाशित 'सेनानी' नामक पुस्तक प्राप्त कीजिए और पढ़िए।

❋ ❋ ❋

अध्याय
7

भारतीय गायिकाओं में बेजोड़ लता मंगेशकर

– कुमार गंधर्व

बरसों पहले की बात है। मैं बीमार था। उस बीमारी में एक दिन मैंने सहज ही रेडियो लगाया और अचानक एक अद्वितीय स्वर मेरे कानों में सुनाई दिया। स्वर सुनते ही मैंने अनुभव किया कि यह स्वर कुछ विशेष है, सामान्य नहीं। इस स्वर ने सीधे मेरे मर्म को छुआ मैं तो हैरान हो गया। मुझे समझ में नहीं आ रहा था कि यह स्वर किसका है। मैं तन्मयता से सुनता ही रहा। गाना समाप्त होते ही गायिका का नाम घोषित किया गया– लता मंगेशकर। नाम सुनते ही मैं चकित हो गया। मन–ही–मन एक संगति पाने का भी अनुभव हुआ। सुप्रसिद्ध गायक दीनानाथ मंगेशकर की अजब गायकी, एक दूसरा स्वरूप लिए उन्हीं की बेटी की कोमल आवाज़ में सुनने का प्रथम अनुभव मुझे हुआ।

मुझे लगता है 'बरसात' के भी पहले के किसी चित्रपट का वह कोई गाना था। तब से लता निरंतर गाती चली आ रही है और मैं उसका गाना सुनता आ रहा हूँ। लता के पहले प्रसिद्ध गायिका नूरजहाँ का चित्रपट संगीत में अपना ज़माना था। परंतु उसी क्षेत्र में बाद में आई हुई लता उससे कहीं आगे निकल गई। कला के क्षेत्र में ऐसे चमत्कार कभी–कभी दीख पड़ते हैं। जैसे प्रसिद्ध सितारिये विलायत खाँ अपने सितारवादक पिता की तुलना में बहुत ही आगे चले गए।

मेरा स्पष्ट मत है कि भारतीय गायिकाओं में लता के जोड़ की गायिका हुई ही नहीं। लता के कारण चित्रपट संगीत को और मनोरंजन की दुनिया को विलक्षण लोकप्रियता प्राप्त हुई है, यही नहीं लोगों का शास्त्रीय संगीत की ओर देखने का दृष्टिकोण भी एकदम बदला है। छोटी बात कहूँगा पहले भी घर–घर छोटे बच्चे गाया करते थे पर उस गाने में और आजकल घरों में सुनाई देने वाले बच्चों के गाने में बड़ा अंतर हो गया है। आजकल के नन्हे–मुन्ने भी स्वर में गुनगुनाते हैं। क्या लता इस जादू का कारण नहीं है ? कोकिला का स्वर निरंतर कानों में पड़ने लगे तो कोई भी सुनने वाला उसका अनुकरण करने का प्रयत्न करेगा। ये स्वाभाविक ही है। चित्रपट संगीत के कारण सुंदर स्वर मालिकाएँ[1] लोगों के कानों में पड़ रही हैं। संगीत के विविध प्रकारों से उनका परिचय हो रहा है। उनका स्वर–ज्ञान बढ़ रहा है। सुरीलापन क्या है, इसकी समझ भी उन्हें होती जा रही है। तरह–तरह की लय के भी प्रकार उन्हें सुनाई पड़ने लगे हैं और आकारयुक्त लय के साथ उनकी जान–पहचान होती जा रही है। साधारण प्रकार के लोगों को भी उसकी सूक्ष्मता समझ में आने लगी है। इन सबका श्रेय लता को ही है। इस प्रकार उसने नई पीढ़ी के संगीत को संस्कारित किया है और सामान्य मनुष्य में संगीत विषयक अभिरुचि पैदा करने में बड़ा योगदान किया है। संगीत की लोकप्रियता, उसका प्रसार और अभिरुचि के विकास का श्रेय लता को ही देना पड़ेगा।

सामान्य श्रोता को अगर आज लता की ध्वनिमुद्रिका[2] और शास्त्रीय गायकी[3] की ध्वनिमुद्रिका सुनाई जाए तो वह लता की ध्वनिमुद्रिका ही पसंद करेगा। गाना कौन से राग में गाया गया और ताल कौन–सा था, यह शास्त्रीय ब्यौरा इस

1. स्वरों के क्रमबद्ध समूह। स्वर मालिका में बोल (शब्द) नहीं होते।
2. स्वरलिपि
3. जिसमें गायन को कुछ निर्धारित नियमों के अंदर ही गाया–बजाया जाता है। खयाल, ध्रुपद, धमार आदि शास्त्रीय गायकी के अंतर्गत आते हैं।

आदमी को सहसा मालूम नहीं रहता। उसे इससे कोई मतलब नहीं कि राग मालकोस[1] था अथवा ताल त्रिताल[2]। उसे तो चाहिए वह मिठास, जो उसे मस्त कर दे, जिसका वह अनुभव कर सके और यह स्वाभाविक ही है। क्योंकि जिस प्रकार मनुष्यता हो तो वह मनुष्य है, वैसे ही 'गानपन'[3] हो तो वह संगीत है। और लता का कोई भी गाना लीजिए तो उसमें शत-प्रतिशत यह 'गानपन' मौजूद मिलेगा।

लता की लोकप्रियता का मुख्य मर्म यह 'गानपन' ही है। लता के गाने की एक और विशेषता है, उसके स्वरों की निर्मलता। उसके पहले की पार्श्व गायिका नूरजहाँ भी एक अच्छी गायिका थी, इसमें संदेह नहीं तथापि उसके गाने में एक मादक उत्तान दीखता था। लता के स्वरों में कोमलता और मुग्धता है। ऐसा अनुभव होता है कि लता का जीवन की ओर देखने का जो दृष्टिकोण है वही उसके गायन की निर्मलता में झलक रहा है। हाँ, संगीत दिग्दर्शकों ने उसके स्वर की इस निर्मलता का जितना उपयोग कर लेना चाहिए था, उतना नहीं किया। मैं स्वयं संगीत दिग्दर्शक होता तो लता को बहुत जटिल काम देता, ऐसा कहे बिना रहा नहीं जाता।

लता के गाने की एक और विशेषता है उसका नादमय उच्चार। उसके गीत के किन्हीं दो शब्दों का अंतर स्वरों के आलाप द्वारा बड़ी सुंदर रीति से भरा रहता है और ऐसा प्रतीत होता है कि वे दोनों शब्द विलीन होते-होते एक दूसरे में मिल जाते हैं। यह बात पैदा करना बड़ा कठिन है, परंतु लता के साथ यह बात अत्यंत सहज और स्वाभाविक हो बैठी है।

ऐसा माना जाता है कि लता के गाने में करुण रस विशेष प्रभावशाली रीति से व्यक्त होता है, पर मुझे खुद यह बात नहीं जँचती। मेरा अपना मत है कि लता ने करुण रस के साथ उतना न्याय नहीं किया है। बजाए इसके, मुग्ध शृंगार की अभिव्यक्ति करने वाले मध्य या द्रुतलय[4] के गाने लता ने बड़ी उत्कटता से गाए हैं। मेरी दृष्टि से उसके गायन में एक और कमी हैं; तथापि यह कहना कठिन होगा कि इसमें लता का दोष कितना है और संगीत दिग्दर्शकों का दोष कितना। लता का गाना सामान्यत: ऊँची पट्टी[5] में रहता है। गाने में संगीत दिग्दर्शक उसे अधिकाधिक ऊँची पट्टी में गवाते हैं और उसे अकारण ही चिल्लवाते हैं।

एक प्रश्न उपस्थित किया जाता है कि शास्त्रीय संगीत में लता का स्थान कौन-सा है? मेरे मत से यह प्रश्न खुद ही प्रयोजनहीन है। उसका कारण यह है कि शास्त्रीय संगीत और चित्रपट संगीत में तुलना हो ही नहीं सकती। जहाँ गंभीरता शास्त्रीय संगीत का स्थायीभाव है वहीं जलदलय[6] और चपलता चित्रपट संगीत का मुख्य गुणधर्म है। चित्रपट संगीत का ताल प्राथमिक अवस्था का ताल होता है, जबकि शास्त्रीय संगीत में ताल अपने परिष्कृत रूप में पाया जाता है। चित्रपट संगीत में आधे तालों का उपयोग किया जाता है। उसकी लयकारी बिलकुल अलग होती है, आसान होती है। यहाँ गीत

---

1. भैरवी थाट का राग, जिसमें रे और प वर्जित हैं। इसमें सारे स्वर कोमल लगते हैं। यह गंभीर प्रकृति का लोकप्रिय राग है।
2. यह सोलह मात्राओं का ताल है। इसमें चार-चार मात्राओं के चार विभाग होते हैं।
3. गाने का ऐसा अंदाज़ जो एक आम आदमी को भी भावविभोर कर दे।
4. लय तीन प्रकार की होती है- (i) विलंबितलय (धीमी) (ii) मध्यलय (बीच की) (iii) द्रुतलय (तेज़) मध्यलय से दुगुनी और विलंबितलय से चौगुनी तेज़ लय द्रुतलय कहलाती है।
5. ऊँचे (तारसप्तक के) स्वरों का प्रयोग
6. द्रुत लय (तेज़)

और आघात को ज़्यादा महत्व दिया जाता है। सुलभता और लोच[1] को अग्र स्थान दिया जाता है; तथापि चित्रपट संगीत गाने वाले को शास्त्रीय संगीत की उत्तम जानकारी होना आवश्यक है और वह लता के पास नि:संशय है। तीन-साढ़े तीन मिनट के गाए हुए चित्रपट के किसी गाने का और एकाध खानदानी शास्त्रीय गायक की तीन-साढ़े तीन घंटे की महफ़िल, इन दोनों का कलात्मक और आनंदात्मक मूल्य एक ही है, ऐसा मैं मानता हूँ। किसी उत्तम लेखक का कोई विस्तृत लेख जीवन के रहस्य का विशद् रूप में वर्णन करता है तो वही रहस्य छोटे से सुभाषित या नन्ही-सी कहावत में सुंदरता और परिपूर्णता से प्रकट हुआ भी दृष्टिगोचर होता है। उसी प्रकार तीन घंटों की रंगदार महफ़िल का सारा रस लता की तीन मिनट की ध्वनिमुद्रिका में आस्वादित किया जा सकता है। उसका एक-एक गाना एक संपूर्ण कलाकृति होता है। स्वर, लय, शब्दार्थ का वहाँ त्रिवेणी संगम होता है और महफ़िल की बेहोशी उसमें समाई रहती है। वैसे देखा जाए तो शास्त्रीय संगीत क्या और चित्रपट संगीत क्या, अंत में रसिक को आनंद देने की सामर्थ्य किस गाने में कितनी है, इस पर उसका महत्व ठहराना उचित है। मैं तो कहूँगा कि शास्त्रीय संगीत भी रंजक न हो, तो बिलकुल ही नीरस ठहरेगा। अनाकर्षक प्रतीत होगा और उसमें कुछ कमी-सी प्रतीत होगी। गाने में जो गानपन प्राप्त होता है, वह केवल शास्त्रीय बैठक के पक्केपन की वजह से ताल सुर के निर्दोष ज्ञान के कारण नहीं। गाने की सारी मिठास, सारी ताकत उसकी रंजकता पर मुख्यत: अवलंबित रहती है और रंजकता का मर्म रसिक वर्ग के समक्ष कैसे प्रस्तुत किया जाए, किस रीति से उसकी बैठक बिठाई जाए और श्रोताओं से कैसे सुसंवाद साधा जाए, इसमें समाविष्ट है। किसी मनुष्य का अस्थिपंजर और एक प्रतिभाशाली कलाकार द्वारा उसी मनुष्य का तैलचित्र[2], इन दोनों में जो अंतर होगा वही गायन के शास्त्रीय ज्ञान और उसकी स्वरों द्वारा की गई सुसंगत अभिव्यक्ति में होगा।

चित्रपट संगीत द्वारा लोगों की अभिजात्य संगीत से जान-पहचान होने लगी है। उनकी चिकित्सक और चौकस वृत्ति अब बढ़ती जा रही है। केवल शास्त्र-शुद्ध और नीरस गाना उन्हें नहीं चाहिए, उन्हें तो सुरीला और भावपूर्ण गाना चाहिए। और यह क्रांति चित्रपट संगीत ही लाया है। चित्रपट संगीत समाज की संगीत विषयक अभिरुचि में प्रभावशाली मोड़ है। चित्रपट संगीत की लचकदारी उसकी एक और सामर्थ्य है, ऐसा मुझे लगता है। उस संगीत की मान्यताएँ, मर्यादाएँ, झंझटें सब कुछ निराली हैं। चित्रपट संगीत का तंत्र ही अलग है। यहाँ नवनिर्मिति की बहुत गुंजाइश है। जैसा शास्त्रीय रागदारी का चित्रपट संगीत दिग्दर्शकों ने उपयोग किया, उसी प्रकार राजस्थानी, पंजाबी, बंगाली, प्रदेश के लोकगीतों के भंडार को भी उन्होंने खूब लूटा है, यह हमारे ध्यान में रहना चाहिए। धूप का कौतुक करने वाले पंजाबी लोकगीत, रूक्ष और निर्जल राजस्थान में पर्जन्य[3] की याद दिलाने वाले गीत, पहाड़ों की घाटियों, खोरों में प्रतिध्वनित होने वाले पहाड़ी गीत, ऋतुचक्र समझाने वाले और खेती के विविध कामों का हिसाब लेने वाले कृषिगीत और ब्रजभूमि में समाविष्ट सहज मधुर गीतों का अतिशय मार्मिक व रसानुकूल उपयोग चित्रपट क्षेत्र के प्रभावी संगीत दिग्दर्शकों ने किया है और आगे भी करते रहेंगे। थोड़े में कहूँ तो संगीत का क्षेत्र ही विस्तीर्ण है। वहाँ अब तक अलक्षित, असंशोधित और अदृष्टिपूर्व ऐसा खूब बड़ा प्रांत है तथापि बड़े जोश से इसकी खोज और उपयोग चित्रपट के लोग करते चले आ रहे हैं। फलस्वरूप चित्रपट संगीत दिनोंदिन अधिकाधिक विकसित होता जा रहा है।

ऐसे इस चित्रपट संगीत क्षेत्र की लता अनभिषिक्त[4] साम्राज्ञी है। और भी कई पार्श्व गायक-गायिकाएँ हैं, पर लता

---

1. स्वरों का बारीक मनोरंजक प्रयोग
2. जिस चित्र में तैलीय रंगों का प्रयोग किया जाता है।
3. बादल
4. बेताज

की लोकप्रियता इन सभी से कहीं अधिक है। उसकी लोकप्रियता के शिखर का स्थान अचल है। बीते अनेक वर्षों से वह गाती आ रही है और फिर भी उसकी लोकप्रियता अबाधित है। लगभग आधी शताब्दी तक जन-मन पर सतत प्रभुत्व रखना आसान नहीं है। ज़्यादा क्या कहूँ, एक राग भी हमेशा टिका नहीं रहता। भारत के कोने-कोने में लता के गाने जा पहुँचे, यही नहीं परदेस में भी उसका गाना सुनकर लोग पागल हो उठें, यह क्या चमत्कार नहीं है ? और यह चमत्कार हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं।

ऐसा कलाकार शताब्दियों में शायद एक ही पैदा होता है। ऐसा कलाकार आज हम सभी के बीच है, उसे अपनी आँखों के सामने घूमता-फिरता देख पा रहे हैं। कितना बड़ा है हमार भाग्य!

अभ्यास

1. लता के गायन की विशेषताएँ लिखिए।
2. ''लता ने करुण रस के साथ उतना न्याय नहीं किया है। बजाए इसके, मुग्ध शृंगार की अभिव्यक्ति करने वाले गाने लता ने बड़ी उत्कटता से गाए हैं। इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं ?
3. शास्त्रीय संगीत और चित्रपट संगीत में अंतर बतलाइए।
4. ''चित्रपट संगीत ने लोगों के कान बिगाड़ दिए हैं'' - आप इस कथन से कहाँ तक सहमत हैं ?
5. संगीत के क्षेत्र को विस्तीर्ण क्यों कहा गया है ?
6. स्वर साम्राज्ञी 'लता मंगेशकर' पर एक लघु निबन्ध लिखिए।
7. पाठ में विभिन्न प्रदेशों के विविध लोकगीतों की चर्चा की गई है। आप भी अपनी क्षेत्रीय बोली का कोई लोकगीत लिखिए तथा उसका मातृभाषा में अनुवाद कीजिए।

योग्यता विस्तार

1. ''लता संगीत क्षेत्र की महान साम्राज्ञी हैं।'' इस विषय पर अधिकाधिक जानकारी प्राप्त कर उन्हें मिले पुरस्कारों एवं सम्मानों की सूची बनाइए।
2. लता मंगेशकर पुरस्कार के बारे में जानकारी एकत्र कीजिए।
3. आप वर्तमान गायिकाओं में गायन के आधार पर लता के बाद किसे साम्राज्ञी का स्थान देने योग्य समझते है और क्यों ? इस विषय पर कक्षा में चर्चा कीजिए।
4. शास्त्रीय संगीतकारों और चित्रपट संगीतकारों की अलग-अलग सूची बनाकर संगीत के क्षेत्र में अपनी जानकारी बढ़ाइए।
5. लता मंगेशकर के देशभक्ति गीतों का कैसेट अथवा सी.डी. प्राप्त कर गीतों का आनंद लीजिए।

❋ ❋ ❋

अध्याय
8

छोटे-छोटे सुख

– रामदरश मिश्र

पढ़ाई और नौकरी की लंबी यात्रा के बाद जब घर में विश्राम करने का अवसर मिला तो बड़ी आश्वस्ति प्राप्त हुई। इस यात्रा में न जाने कितने ऐसे काम करने पड़े थे, जिन्हें मन नहीं चाहता था। जिंदगी में लगातार विपत्तियाँ आती-जाती रहें, किसका मन यह चाहेगा ? किसका मन चाहेगा कि अभावों के अथाह जंगल में उसका बचपन बीते ? वह चले तो यह पता न हो कि अगली राह कौन सी होगी और उसे कहाँ जाना है? कौन चाहेगा कि किसी तरह पगडंडियों से चलते-चलते वह शिक्षा की ऊँची सीढ़ी तक पहुँचे तो नौकरी के लिए उसे भटकना पड़े ? उसे अपने ही विश्वविद्यालय में यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ धक्के खाने पड़ें और धक्के खाते-खाते वह दूर प्रदेश में जा गिरे। वहाँ भी एक स्थान से दूसरे स्थान तक भटकता फिरे-कभी स्वेच्छा से, कभी विवशता से और अंत में वहाँ से भी निष्कासित होने की नियति झेलनी पड़े और राजधानी में आकर यहाँ के झोंकों में उठता-गिरता रहे। मेरा मन नहीं चाहता रहा, किंतु यह सब झेलना ही पड़ा; लेकिन वह ऐसे कामों से भी भागता रहा, जो उसकी उन्नति के लिए थे। उसे लगता रहा- रोटी का जुगाड़ हो गया है, बहुत है, कौन तरक्की के चक्कर में पड़कर अपने को लहूलुहान करता रहे। इसलिए वह उन सारे कामों से उदासीन रहा, जो तरक्की के लिए जरूरी होते हैं। कुछ शिक्षक और साहित्यकार मित्रों तथा आत्मीय छात्रों की दुनिया ही उसकी दुनिया बनी रही और उसकी सबसे बड़ी दुनिया थी अपना घर। बाहर जितनी देर रहना जरूरी होता था उतनी ही देर रहता था, फिर घर की ओर भाग खड़ा होता था।

हाँ, यह मेरा मन बड़ा ही अल्पाकांक्षी है, उसे आलसी या कायर भी कह सकते हैं। जो कहना हो, कह लीजिए, उसे भागमभाग करने की उत्तेजना नहीं प्राप्त होती। उसे भागमभाग में शामिल होना ही पड़ा तो हुआ- अर्थात् पढ़ाई के लिए, नौकरी के लिए या किसी के संकट के समय; लेकिन उन्नति के लिए योजनाएँ बना बनाकर वह यहाँ-वहाँ भागता नहीं फिरा। मन की इस घर-घुसरी प्रकृति के बावजूद मुझे काफी कुछ मिला, भले ही देर से मिला, भले ही मात्रा में कम मिला, मिला। कभी-कभी आश्चर्य होता है कि यह सबकुछ कैसे मिल गया ? जो मिला वह भीतर गहरा संतोष भर गया। बार-बार भीतर बजता रहा कि जो मिला वह कम तो नहीं। वह गहरा संतोषकारी इसलिए भी लगता रहा कि उसे पाने के लिए वह सबकुछ नहीं करना पड़ा, जो अनेक लोगों को करना पड़ता है। जमीर को गिरवी रखे बिना इतना कुछ पा लिया तो कितना कुछ पा लिया। क्षेत्र चाहे निजी जीवन का रहा हो, चाहे शिक्षा का रहा हो, चाहे साहित्य का रहा हो, उसके बेचैन अभावों के प्रसार में उपलब्धियाँ उगती रहीं, चिलचिलाती धूप की व्याप्ति से छाँहें आ-आकर सिर को सहलाती रहीं और धीरे-धीरे यात्रा बढ़ती रही तथा मन के भीतर मानव-छवियों और मूल्यों के प्रति विश्वास भरता रहा।

यह नहीं कि मैं अपने को बड़ा शिक्षा-शास्त्री समझता रहा या बड़ा साहित्यकार मानता रहा, नहीं मैं बड़ा नहीं हूँ और न बड़ा होने का भ्रम पाला। वह मुझे अच्छा ही नहीं लगता। मैं बड़ा विद्वान् नहीं हूँ। देश-विदेश की तमाम चीजें हैं, जिन्हें मैं नहीं पढ़ सका हूँ और पढ़ा भी है तो वे मेरी स्मृति में सुरक्षित नहीं रह सकी हैं। मैं सिद्ध वक्ता भी नहीं रहा, अतः अकादमिक क्षेत्र में आयोजित व्याख्यानों से बचता रहा और जो नहीं हो सका या हो सकता था, उसके लिए मन में कोई

ललक नहीं थी और ना ही न हो पाने का दु:ख। विश्वविद्यालय के प्रभावशाली लोगों के इलाके में घूमने-घामने और संपर्क साधने की कतई अभिलाषा नहीं रही। हाँ, जितना जानता था उतना अपने छात्रों को सलीके से देने का उत्साह अवश्य रहा है। मुझसे बहुत अच्छे-अच्छे शिक्षक मेरे साथ रहे हैं और उनकी ख्याति में मुझे सुख मिलता रहा है; लेकिन यह सच है कि यह रास्ता पद संबंधी उन्नति की मंजिल की ओर नहीं जाता है। इसलिए मैं उन्नति के बिंदुओं तक पहुँचा तो सही, किंतु बहुत देर से, कछुए की तरह।

वैसे देर से पहुँचना मेरी नियति बन गया है। दुनिया में आया तो अपने सारे भाई-बहनों के बाद आया। बस एक बहन जरूर मेरे पीछे-पीछे चली आई। शिक्षा-यात्रा के पथ पर चलने लगा तो आगे के रास्ते दिखाई नहीं पड़ते थे। कहाँ जाना है, किस रास्ते जाना है, कुछ पता नहीं बस, जिस रास्ते पर चल रहा होता था उसी का ज्ञान होता था। जब कुछ दूर चलने के बाद वह रास्ता समाप्त हो जाता था तब खड़ा होकर सोचना पड़ता था कि आगे जाना है कि नहीं और जाना है तो किस रास्ते पर!

मैं बड़े सुख की कामना में अपने को लहूलुहान नहीं करता। छोटे-छोटे सुखों का अपना उजास होता है। मैं छोटा आदमी हूँ और छोटा बना रहना चाहता हूँ, इसलिए बड़े सुख की न कल्पना करता हूँ, न कामना। वैसे बड़ा सुख है क्या? कोई बड़ा पद, बड़ी संपत्ति, बड़ा पुरस्कार, बड़ा नाम, बड़ा यश ? यानी शिखर से शिखर तक की कूद। इन बड़े सुखों की प्राप्ति के लिए आदमी न जाने कितना कुछ खो देता है। ये सुख रोज-रोज तो नहीं मिलते, किंतु कभी-कभी मिल जानेवाले इन सुखों के लिए आदमी रोज-रोज मिलनेवाले घर-परिवेश के न जाने कितने-कितने, छोटे-छोटे, प्यारे-प्यारे सुखों को खो देता है और खो देता है अपने व्यक्तित्व का भीतरी निजी तेज। वह तो न जाने कितने-कितने समीकरणों में अपने को उलझा लेता है, कितने-कितने खंडों में अपने को बाँट लेता है। उसकी हँसी, उसके आँसू, उसके स्वर सभी बँट जाते हैं और अपने नहीं रह पाते।

मुझे भय लगता है ऐसे बड़प्पन की प्राप्ति की कल्पना से। बड़ा आदमी बनने का मतलब है कि मेरा सारा निजी सुख, खाँसना-खँखारना, उठना-बैठना मीडिया के जरिए लोगों में समाचार बनकर भनभनाता रहेगा। किसी अभीप्सित कार्यक्रम में जा नहीं सकूँगा, यदि मुझे विशिष्ट रूप में नहीं बुलाया गया है। श्रोता के रूप में मैं कुछ विलंब से जाकर भी पीछे की किसी खाली कुरसी पर बैठ नहीं सकता, अगली कतार की कुरसियाँ पहले से भरी होंगी। मैं वहाँ कुछ पल खड़ा होकर निहारूँगा, फिर कोई श्रोता मेरे लिए सीट छोड़कर पीछे चला जाएगा और मैं परम बेहयाई से उसकी सीट पर बैठ जाऊँगा। कार्यक्रम के पीछे आयोजित चायपान के समय या तो मैं हूँगा नहीं या हूँगा तो तना हुआ एक किनारे खड़ा रहूँगा। कोई लपककर जाएगा और मेरे लिए चाय-बिस्कुट ले आएगा। लोग मुझे घेरकर खड़े हो जाएँगे और मैं उनसे बोलते-बतियाते रहने की कृपा करूँगा। किसी से हँसकर बोलूँगा, किसी से मुँह फुलाकर, किसी से बोलूँगा ही नहीं। किसी जान-पहचान के आदमी के बच्चे की पीठ ठोंक दूँगा और हँस-हँसकर उससे उसका नाम पूछूँगा। और जब मैं वहाँ से चला जाऊँगा तब लोग राहत की साँस लेंगे कि गया यह बड़ा आदमी। और फिर, तरह-तरह से टिप्पणियाँ जड़ेंगे।

नहीं, ऐसा आदमी बनने की कल्पना से मुझे डर लगता है। मुझे अच्छा लगता है कि मेरे निजी सुख-दु:ख की बात मेरे पास ही चक्कर काटती है, वह समाचार नहीं बनती। मेरी गलतियाँ और उपब्धियाँ मेरे और मेरे आत्मीयों के बीच होती हैं, वे अखबारों के सिर पर चढ़कर यहाँ-वहाँ नाचती नहीं। मुझे अच्छा लगता है उनके साथ होना - जो मुझसे मिलने

आते हैं। मैं सामान्य आदमी हूँ, मुझे अच्छा लगता है लोगों के बीच एक सामान्य आदमी की तरह खो जाना और अनदेखा रहना। मुझे अच्छा लगता है किसी कार्यक्रम में जाकर चुपचाप आगे-पीछे किसी खाली सीट पर अपने को डाल देना और चायपान के समय लोगों के बीच जा-जाकर बोलना बतियाना। मुझे अच्छा लगता है किसी मामूली सी चाय की दुकान के आगे पड़ी बेंच पर या सामने फैली हुई दूब पर किसी के भी साथ बैठकर चाय पीना, किसी भी साफ-सुथरे ढाबे में कुछ खा लेना। यह सब मेरा सुख है, जिसे सँजोकर रखना चाहता हूँ।

छोटा ही सही, किंतु सबसे बड़ा सुख यह होता है कि जीवन अपने मन से जिया जाय- चाहे वह साहित्यिक जीवन हो, चाहे सामाजिक या पारिवारिक जीवन। हमारा विवेक ही हमारे निर्णयों और क्रिया-व्यापारों का नियंता हो और हमारी जवाबदेही उसी के प्रति हो। मेरा लेखन किसी दल से नहीं जुड़ा है और न उसे किसी सत्ता-संस्थान से या प्रभावशाली माने जाने वाले लेखक, आलोचक से कुछ पाना है।

दुनिया बड़ी है और यहाँ-वहाँ से छनकर हमारे पास भी सुख आया करते हैं- आते हैं तो हम सहज रूप से स्वीकार कर लेते हैं, नहीं आते हैं तो उनके न आने की कोई अनुभूति परेशान नहीं करती। अपने मन से जीते हुए बिना डर और प्रलोभन के सहज ढंग से अपना रचना-कर्म करते हुए जितना पा जाते हैं, वह बहुत लगता है, वह अपना लगता है।

और सुख का स्रोत साहित्य ही तो नहीं, जीवन के तमाम संदर्भ है, तमाम वस्तुएँ हैं, तमाम क्रियाएँ हैं, तमाम लोग हैं, जहाँ से सुख की छोटी-छोटी धाराएँ निरंतर फू टती रहती हैं और सुख का सबसे बड़ा कारक तो अपना मन होता है न! उसी पर निर्भर है कि वह किसे सुख मानता है किसे दु:ख। मेरा मन तो बहुत अल्पतोषी है, छोटी-छोटी बातों में सुख पा लेता है। सच बात तो यह है कि मैं उन अनेक छोटे-छोटे कर्मों से घबराता हूँ जिनकी सिद्धि अपने प्रयत्न में नहीं, दूसरों के हाथों में होती है।

दरअसल, मेरे लिए ये छोटी-छोटी उपब्धियाँ बड़ी उपलब्धि बन जाती हैं। रेलवे स्टेशन के टिकट आरक्षित करा लेता हूँ तो इतनी आश्वस्ति मिलती है, जैसे बहुत बड़ी चीज मिल गई हो। किसी अस्पताल से अपने को या अपने घर के किसी व्यक्ति को दिखा लाता हूँ तो लगता है, बड़ा काम कर आया। कोर्ट-कचहरी से तो भागता ही रहा हूँ, किंतु यदि जाना पड़ गया तो वहाँ से लौटकर लगता है कि कितनी बड़ी मुसीबत से जान बची। ठीक-ठाक क्लास में आरक्षण के बावजूद रेल-यात्रा पर निकलता हूँ तो लगता है कि पता नहीं कैसे क्या होगा। यात्रा में अजब-अजब तरह के लोग मिलते हैं। और अच्छे सहयात्री मिल जाते हैं तब लगता है, यात्रा संपन्न हो ही जाएगी और मन में इनसानियत के प्रति नया विश्वास भी उगता जाता है, जो बड़ा सुखद होता है। मन चाहता है, अच्छे लोग मिलते रहें, अच्छी यात्राएँ होती रहें और वह उनके छोटे-छोटे सुखों से स्पंदित होता रहे। यात्रा शुरू होने से पहले और संपन्न होने के बाद मन डरता रहता है कि पता नहीं कैसा टैक्सीवाला मिले, कैसा ऑटोवाला मिले। वे प्राय: सबकुछ ठीक-ठाक होने पर भी कुछ-न-कुछ तकरार कर ही देते हैं और जब भले टैक्सीवाले या ऑटोवाले मिल जाते हैं तब लगता हैं, मैं इनसे उपकृत हो गया हूँ। कोई किसी को कुछ अतिरिक्त नहीं देता, किंतु अच्छा होने का बोध न जाने कितना कुछ अनजाने दे जाता है।

पाने का बोध बड़ी चीज है। बहुत से लोग बहुतों से बहुत कुछ पा जाते हैं, किंतु वह बोध नहीं पाते, जो उनके मन को कृतज्ञ बनाए और मनुष्यता के प्रति संवेदनशील बनाए रहे। देने वाले बहुत सहज भाव से कुछ ऐसा दे जाते हैं कि उन्हें देने का बोध नहीं होता और पाने वाले सोचते हैं कि इस देने को क्यों याद रखा जाए, यह भी कोई देना है। उस दिन हम

पति-पत्नी ताज से निजामुद्दीन उतरे थे। मुझे आगरा में सम्मान के तहत सरस्वती की एक भारी मूर्ति मिली थी। उसे पत्नी हाथ में उठाए थी। मेरे हाथ में अटैची थी। हम सीढ़ियों पर चढ़ रहे थे कि एकाएक एक युवती की नजर पत्नी पर पड़ी। उसने लपककर कहा, 'लाइए आंटीजी, मुझे दे दीजिए' और उसने जबरदस्ती उनके हाथ से मूर्ति ले ली। जब हम सीढ़ी से उतरे तो उसने मूर्ति पत्नी को वापस कर दी और सहज भाव से आगे बढ़ गई। मैंने थोड़ा पुकारकर उसे धन्यवाद दिया किंतु वह मुसकराकर भीड़ में समा गई। आखिर उसने क्या दिया, कुछ भी तो नहीं; किंतु उसके कुछ भी नहीं देने में क्या अमूल्य मानवीय बोध का बहुत कुछ देना शामिल नहीं है ? उसे यह घटना याद नहीं होगी भला यह भी कोई घटना थी जो याद रहे; किंतु मुझे याद है; पत्नी को भी याद है- घटना नहीं, उसमें अंतर्निहित वह संवेदना, वह बोध, जो हमारे सामाजिक मन को जगाए रखता है और छोटे-छोटे सुख के रूप में जगमगाता रहता है।

हाँ, मैं कोशिश करता हूँ कि मेरा बोध जगा रहे- ऐसी-ऐसी कोटि-कोटि घटनाओं और प्रसंगों के प्रति। ऐसी छोटी-छोटी घटनाएँ नित्य घटित होती हैं हमारे आस-पास, चारों ओर और सहज भाव से कुछ देकर गुजर जाती हैं। लोग उधर ध्यान नहीं देते, स्मृतियों में नहीं उतारते किंतु खुले मन में ये घटनाएँ निरंतर अपने उजास की दस्तक देती हैं और मूल्यवान् स्मृति बनकर उसमें छाई रहती हैं। उसे विश्वास दिलाती रहती हैं कि मनुष्यता अभी मरी नहीं है। छोटे-छोटे भाव और क्रिया-दीप्तियों के रूप में जीवित है, जीवित रहेगी।

अभ्यास

1. रामदरश मिश्र उन सारे कार्यों के प्रति उदासीन क्यों रहे; जो तरक्की के लिए जरूरी हैं ?
2. घर घुसरे मन के बावजूद लेखक को सब कुछ मिल गया - विवेचना कीजिए।
3. ''मैं छोटा आदमी हूँ और छोटा बना रहना चाहता हूँ।'' मिश्र जी के इस कथन का आशय स्पष्ट कीजिए।
4. मिश्रजी ने जिन छोटे-छोटे सुखों की चर्चा की है; उनकी एक सूची बनाइए।
5. बड़प्पन प्राप्ति की कल्पना से मिश्र जी को भय क्यों लगता है ?
6. ''रामदरश मिश्र आजीवन मनुष्यता के प्रति संवेदनशील बने रहे'' पठित पाठ के आधार पर; इस कथन की व्याख्या कीजिए।
7. मूर्ति उठाने वाली युवती से आपको क्या प्रेरणा मिलती है और क्यों ?

योग्यता विस्तार

1. ''आप अब तक की अपनी उपलब्धियों पर संतुष्ट हैं।'' इस विषय पर पाँच वाक्य लिखिए।
2. 'बड़ा होकर भी व्यक्ति अहं भाव से ग्रसित न हो' ऐसे कुछ महापुरुषों के नाम बताइए।
3. 'बड़े सुख की कामना में अपने को लहूलुहान नहीं करना चाहिए।' लेखक की इस उक्ति को आप अपने जीवन में किस प्रकार चरितार्थ करेंगे ? स्पष्ट कीजिए।

❋ ❋ ❋

अध्याय
9

तन हुए शहर के

तन हुए शहर के
पर, मन जंगल के हुए।
शीश कटी देह लिए
हम इस कोलाहल में
घूमते रहे लेकर
विष-घट छलके हुए।

छोड़ दीं स्वयं हमने सूरज की उंगलियाँ
आयातित अंधकार के पीछे दौड़कर।
देकर अंतिम प्रणाम धरती की गोद को
हम जिया किए केवल खाली आकाश पर।
ठंडे सैलाब में बहीं बसन्त-पीढ़ियाँ,
पाँव कहीं टिके नहीं
इतने हलके हुए।

लूट लिए वे मेले घबराकर ऊब ने
कड़वाहट ने मीठी घड़ियाँ सब माँग लीं।
मिटे हुए हस्ताक्षर भी आदिम गंध के
बुझी हुई शामें कुछ नजरों ने टाँग लीं।

हाथों में दूध का कटोरा
चन्दन, छड़ी-
वे सारे सोन प्रहर
रिसते जल के हुए।

कहाँ गए बड़ी बुआ वाले वे आरते
कहाँ गए गेरू-काढ़े सतिये द्वार के
कहाँ गए थापे वे जीजी के हाथों के
कहाँ गए चिकने पत्ते बन्दनवार के
टूटे वे सेतु जो रचे कभी अतीत ने
मंगल त्योहार-वार बीते कल के हुए।

– सोम ठाकुर

तुम थक न बैठो

तुम थकान से
समझौता करके बैठे हो
पलक पाँवड़े मुरझाते होंगे मंजिल के।

तुम आँधी के पाँवों से
चलकर तो देखो
ऐसा बादल कौन तुम्हारी राह न छोड़े
आसमान की तरह
हृदय को फैलाओ तो
ऐसी धरती कौन तुम्हारी छाँह न ओढ़े
यह पहाड़
जो अपराजेय दिखाई देता
शीश झुकाता आया है सम्मुख घायल के।

तुम थक कर बैठे
तो पीछे के सब राही
इस डग पर आकर अनजाने रुका करेंगे
जो माहौल बना जाओगे तुम इस डग पर
उसमें जाने कितने साहस चुका करेंगे
बिन सोचे बढ़ जाओ रुकने वाले, पीछे
तुतलाते राही आते हैं संभल संभल के।

– जयकुमार जलज

अभ्यास

1. ''तन हुए शहर के, पर मन जंगल के हुए'' इस पंक्ति में निहित कवि के आशय को समझाइए।
2. कवि ने ''आयातित अंधकार'' किसे कहा है ?
3. आज के विषाक्त शहर की विसंगतियाँ लिखिए।
4. कवि ने अपनी श्रेष्ठ लोक परम्पराओं को किन-किन रूपों में स्मरण किया है ?
5. वर्तमान और पुरातन जीवन शैली में कौन-कौन सी भिन्नताएँ हैं ?
6. ''ठंडे सैलाब में बहीं बसंत पीढ़ियाँ'' पंक्ति का भाव विस्तार कीजिए।
7. कवि सोम ठाकुर तथाकथित वर्तमान शहरी विकास से निराश क्यों हैं ?
8. ''तुम आँधी के पाँवों से चलकर तो देखो'' पंक्ति में निहित कवि का तात्पर्य समझाइए।
9. कवि आसमान की तरह हृदय को फैलाने की बात क्यों कहता है ?
10. कवि ने थककर बैठने की बात का निषेध क्यों किया है ?
11. कवि के अनुसार बिना सोचे आगे बढ़ जाने से क्या परिवर्तन होगा ?
12. ''तुम थक न बैठो'' नवगीत का सारांश चार वाक्यों में लिखिए।

योग्यता विस्तार

1. हिन्दी के नवगीतकारों में सोम ठाकुर का महत्वपूर्ण स्थान है। किन्ही चार अन्य नवगीतकारों के नाम पता लगाइए।
2. आपने कोई कविता गीत या नवगीत लिखा है ? आपके पास भाषा है, भाव हैं कल्पना है। कविता या गीत लिखकर अपने शिक्षक / व्याख्याता को बताइए।
3. साहस और चरैवेति का पाठ सिखाने वाली दो अन्य कवियों की कविताएँ ढूँढ़ कर पढ़िए।
4. जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा देने वाली आंचलिक भाषा से अनूदित कविताओं को याद कर प्रार्थना सभा में सुनाइए।
5. क्षेत्रीय बोली की पहेलियों व चुटकुलों का खड़ी बोली में अनुवाद कीजिए।

❋ ❋ ❋

अध्याय
10

देवकी

– नरेन्द्र कोहली

देवकी का मन कैसा तो मगन हो रहा था। इस प्रकार के आनन्द का अनुभव उन्होंने पहले कभी नहीं किया था।...

वे कंस के कारागार की एक कोठरी में बंदी थी; फिर भी जाने क्यों लग रहा था कि उनके चारों ओर दीवारें नहीं थी। वे किसी अत्यंत विस्तृत और उन्मुक्त स्थान पर बैठी थीं। कभी लगता था कि वे मेघों पर बैठी हैं; और मेघ खुले आकाश में भ्रमण कर रहे हैं। कभी लगता था कि वे स्वयं ही मेघ हैं और पवन के पंख लगाकर वे सारे ब्रह्मांड में उड़ती फिर रही हैं। फिर लगता वे स्वयं ही आकाश भी हैं। सूर्य, चंद्रमा, ग्रह, नक्षत्र सब उनके खिलौने हैं। सब उनकी प्रसन्नता के लिए हैं। वे सब उनके चारों ओर घूम रहे हैं; और हाथ जोड़े उनकी आज्ञा का पालन करने की प्रतीक्षा में हैं।... इस कोठरी में तो वे खेल-खेल में आ बैठी हैं; जैसे कोई बच्चा लुका-छिपी खेलता हुआ अपने मित्रों को भ्रम में रखने के लिए, घर के किसी अज्ञात कोने में आ छिपा हो।... आत्मा का मनोरंजन तो उससे भी अधिक लीलामय है। स्वेच्छा से आकर शरीर-रूपी इस पिंजरे में बंद होकर बैठ गई है; और स्वयं को बंदिनी कहने लगी है। सातों समुद्रों के वक्ष पर उन्मुक्त भ्रमण करने वाले एक विराट जलपोत ने, शरीर रूपी इस साँकल से स्वयं को बाँध लिया है, और स्वयं को लंगर का बंदी मानने लगा है।...

अगले ही क्षण लगता कि वे समुद्र की लहरों पर आसन जमाए बैठी हैं। लहरें उनको झूला झुला रही हैं। कभी वे अपनी पेंग बढ़ाती हुई जल के पहाड़ पर जा बैठती हैं; और कभी जलप्रपात पर आरूढ़ होकर वे सागर के तल पर आ जाती हैं। फिर आभास होता कि वे स्वयं ही समुद्र हैं। ये लहरें तो उनके अपने हाथ-पैर हैं। इन्हें जहाँ तक फैलाना चाहें, फैला सकती हैं।

चाहें तो अभी चंद्रमा को अपनी मुट्ठी में बाँधकर, उसे खींचकर धरती पर ला सकती हैं; और चाहें तो अपनी मुट्ठी खोलकर तारों का चूर्ण सारे आकाश पर फैलाकर, उसका शृंगार कर सकती हैं। ये वन, नदियाँ और पर्वत, उनकी दृष्टि के आनन्द के लिए थे।... वे सारी सृष्टि के केन्द्र में थीं; और सारी सृष्टि उनकी इच्छा मात्र से बन और बिगड़ रही थी।...

क्षीरसागर जैसे उनकी गोद में मचल रहा था। शेषनाग को वे अपनी हथेलियों में उठा लेती थीं और वह विराट नाग, गौर वर्ण का एक नन्हा सा बालक बनकर किस मधुर ढंग से उनकी ओर देखकर पुकारता था, ''माँ''।

एक और शिशु भी था– साँवला सा। अत्यंत नटखट, चुलबुला; जैसे पारा। एक स्थान पर टिकना ही नहीं जानता था, जैसे ऊर्जा का सागर हो। लहरों सा थिरकता आता था; और जब तक कोई पकड़े, वह हाथों से फिसलकर कहीं दूर चला जाता था। क्षीर सागर तो उसके आँगन जैसा था।... यह तो स्वयं शेषशायी नारायण ही थे, किंतु कैसे बालक बने उपद्रव कर रहे थे। मन होता था, उसे पकड़ कर अपने हृदय में रख लें पर वह पकड़ में कहाँ आता था; पवन के नटखट झोंके सा आता था और गौर बालक को परे धकेल कर कहता था, ''चल भाग। ये तेरी नहीं, मेरी माँ हैं।''

गौर बालक क्रोध में पैर पटकता था, ''तेरी माँ हैं तो क्या मेरी माँ नहीं हो सकती ?''

''जा तुझे दूसरी माँ दी।'' साँवला हँसता था।

गौर बालक दाँत पीसकर कहता था, ''दूसरी क्यों ? ये ही क्यों नहीं ?''

साँवला हँसता था, धींगामस्ती करता था; और हँसता ही जाता था, ''क्योंकि ये मेरी हैं।''

''मेरी भी हैं।''

''इस जन्म में नहीं। तेरी नहीं हैं। मेरी हैं।''

''मेरी क्यों नहीं ?''

''मेरी इच्छा।''

जाने कितनी देर तक देवकी उनकी क्रीड़ा देखती रहीं। दोनों एक-दूसरे को धकियाते हुए, धींगामस्ती करते, उनकी ओर बढ़ते थे। उनकी गोद में बैठने को मचलते थे; किंतु बैठता एक भी नहीं था। पास आते थे; और फिर दूर निकल जाते थे... जैसे पवन के उन्मुक्त झोंके, जैसे समुद्र की अटखेलियाँ करती लहरें, जैसे मेघों में मचलती चपलायें, जैसे पर्वत से उतरते, झपटते, सरपट दौड़ते झरने...

''क्या बात है देवकी ?''

''आज समझ पाई हूँ कि संसार का सारा आनन्द तो मेरे भीतर है।''

''आनन्द तुम्हारे भीतर है; या तुम ही आनन्द स्वरूपा हो ?'' वसुदेव हँस पड़े।

''मैं आनन्दस्वरूपा हूँ। मैं ही यह सब कुछ हूँ। सर्वत्र हूँ, सर्व-व्यापक हूँ, व्योमातीत हूँ, निरंतर हूँ।''

''कंस सुनेगा तो भय से ही मर जाएगा'', वसुदेव हँस रहे थे।

''कंस को तो मरना ही होगा'', देवकी बोलीं, ''क्योंकि वह समझता नहीं कि मेरा न कभी जन्म हुआ, न मेरी मृत्यु होगी। मैं कभी भी यह शरीर नहीं थी।''

''तो तुम कौन हो देवकी ?'' वसुदेव पूर्णत: गंभीर थे।

''मैं अपने स्वभाव से निराकार सर्वव्यापी आत्मा हूँ।''

वसुदेव देख रहे थे; देवकी सचमुच वह देवकी नहीं थीं। वे तो कुछ और ही हो गई थीं। ''देवकी! दत्तात्रेय ने कहा है कि पंचभूतात्मक विश्व मृगमरीचिका है। भ्रम है। मैं किसको नमस्कार करूँ ? क्योंकि एक मैं ही तो निरंजन हूँ।''

''उन्हें सत्य का बोध हुआ। उन्होंने उसे वाणी दी'', देवकी बोलीं, ''मुझे स्वयं अपने-आप पर आश्चर्य होता है कि मैं इतनी दुखी किस बात से थी ? वह सारा दु:ख तो एक दु:स्वप्न था। जाने मैंने उसे कैसे सत्य मान लिया। उस नारकीय संसार को।''

''वह दु:ख नहीं था, तपस्या थी; और तपस्या के बिना माया का भ्रम दूर नहीं होता'', वसुदेव बोले, ''माया का

भ्रम हट जाए तो फिर आनन्द स्वयं ही उद्घाटित हो जाता है।''

''शायद कुछ ऐसा ही है'', देवकी ने कहा, ''मेरे कान बाँसुरी की ऐसी मीठी टेर सुन रहे हैं, जैसी मैंने कभी नही सुनी। मुझे लग रहा है कि मेरे भीतर अलौकिक पुष्पों की बगिया महक रही है। दसों दिशाओं में सुगंध ही सुगंध है। मैं जैसे अपनी ही वाणी पर मुग्ध हो रही हूँ।... यह क्या है आर्यपुत्र! सागर, वन, पर्वत, नदियाँ–सब मेरे भीतर हैं। मैं यह शरीर मात्र नहीं हूँ, मैं विराट हूँ, विराट अस्तित्व।''

बाहर कुछ लोगों के आने की पदचाप सुनाई दी। आने वाले बहुत शीघ्रता में थे। कोई बोल नहीं रहा था, सब जैसे भाग रहे थे।

''क्या हो गया है इनको ?'' वसुदेव जैसे अपने–आपसे पूछ रहे थे; किंतु उत्तर कौन देता।

आरक्षी आकर उनके द्वार के आस–पास खड़े हो गए तो देवकी और वसुदेव को समझने में कठिनाई नहीं हुई कि कोई बड़ा अधिकारी कारागार के निरीक्षण के लिए आ रहा है।... और फिर एक द्वारपाल ने आकर उनकी कोठरी का ताला खोल दिया।... कुछ सशस्त्र सैनिक आकर कोठरी की दीवारों से लगकर खड़े हो गए।

प्रद्योत और प्रलंब के साथ कंस ने प्रवेश किया।

वसुदेव एक ही दृष्टि में पहचान गए कि कंस बहुत घबराया हुआ था; किंतु अपने भय को छिपाने के लिए वह बहुत आक्रामक मुखौटा धारण किए हुए था।

''कैसी हो देवकी ?'' उसने प्रश्न अवश्य पूछा; किंतु उसमें जिज्ञासा का तनिक सा भी भाव नहीं था।

''मैं पूर्णत: स्वस्थ और प्रसन्न हूँ...'' देवकी के स्वर के माधुर्य को सुनकर कंस चौंक उठा। उस स्वर में न क्रोध था, न घृणा, न पीड़ा।

''तनिक भी उद्विग्न नहीं हो ?'' कंस कुपित हुआ, ''विचलित नहीं हो ? आशंकित भी नहीं हो ? भय नहीं है तुम्हें कि तुम अपने आठवें पुत्र को जन्म दोगी; और मैं उसे अपना संभावित हत्यारा घोषित कर राजद्रोह के अपराध में मृत्युदंड दूँगा।''

वसुदेव कहना चाहते थे, ''अधर्म, अन्याय और पाप का विरोध, राजद्रोह कब से होने लगा कंस ?''

किंतु वे बोले नहीं। वे भी देवकी का उत्तर सुनना चाहते थे। देवकी आज कुछ और ही हो गई थीं...

''अस्तित्व और अनस्तित्व में कोई विशेष अंतर नहीं है भाई!'' देवकी अपने मीठे और कोमल स्वर में बोलीं, ''यह भ्रम मात्र है। जो है, वह दिखाई नहीं देता, और जो दिखाई देता है, वह है नहीं...''

कंस का शरीर थरथरा कर रह गया।

''समझ सको तो समझने का प्रयत्न करो'', देवकी पुन: बोलीं, ''जो है, उसका अभाव नहीं हो सकता; और जो नहीं है, उसका भाव नहीं हो सकता।''

प्रद्योत कुछ आगे बढ़कर कंस के निकट आ गया, ''यह तो भय के मारे विक्षिप्त हो चुकी है।''

''आदेश हो तो अभी मैं इसके अस्तित्व-अनस्तित्व को एक कर दूँ।'' प्रलंब ने अपना खड्ग निकाल लिया था। उसके साथ ही सैनिक भी अपने शस्त्रों को साध प्रहारक मुद्रा में आ गए थे।

वसुदेव स्फूर्ति से कूदकर उनके मध्य आ गए थे.. किंतु देवकी ने सहज भाव से अपनी भुजा बढ़ाकर उन्हें एक ओर कर दिया, ''मेरे मन में तुम्हारे प्रति करुणा के सिवाय और कुछ नहीं है भाई। क्योंकि तुम नहीं जानते कि आततायी, शत्रु के शस्त्र से नहीं, अपने पाप से मारा जाता है।''

''क्या बक रही हो!'' कंस की वाणी भय से काँप रही थी, ''मेरे एक संकेत पर मेरे ये मित्र तुम्हारा शीश काटकर तुम्हारे पति को भेंट कर देंगे।''

देवकी हँस पड़ी, ''तुम्हें अपने मित्रों के खड्ग दिखाई पड़ रहे हैं; किंतु तुम उस धरती को नहीं देख रहे, जो तुम्हारे रक्त की पिपासा से अपनी जिह्वा लपलपा रही है। सत्य तो यह धरती ही है। शायद आज तक तुम्हें किसी ने नहीं बताया कि पापियों का रक्तपान कर धरती पवित्र होती है।'' देवकी उसके निकट चली गईं, ''कहो अपने मित्रों से कि वे मेरी हत्या का प्रयत्न कर देखें।... रक्त तो अब वही बहेगा, जिसे धरती पीना चाहती है। मुंड उसी का कटेगा, जिसे चामुंडा धारण करना चाहती है। मार कंस! मुझे मार!'' देवकी का स्वर गर्जना से भर उठा था।

कंस स्तब्ध रह गया।... यह क्या हुआ देवकी को ? यह वह देवकी नहीं थी, जिसे कंस जानता था। वह डरी, सहमी, काँपती हुई, अश्रु बहाती, भीरू देवकी नहीं थी।... थी यह ? कहीं यह स्वयं चामुंडा ही तो नहीं ?... प्रद्योत कह रहा है कि वह दुखों से विक्षिप्त हो गई है, किंतु वह विक्षिप्त नहीं है। कंस विक्षिप्त लोगों की आँखें भली प्रकार पहचानता है। देवकी विक्षिप्त नहीं है। पहले उसका स्वर कैसा मधुर था। वह देवकी का नहीं था।... और अंत में उसका स्वर कितना प्रचण्ड था। वह स्वर भी देवकी का नहीं था।... कौन, किसका था वह स्वर ? कंस को लगा, वह पागल हो जाएगा।... यह कोई अभिचार था? कोई तांत्रिक प्रयोग? किसी प्रेत का प्रवेश हुआ था देवकी के शरीर में ? किसका प्रेत था वह ? कौन कंस को डरा रहा था ? कहीं वह प्रेत यह तो नहीं चाहता कि कंस अपने आवेश में देवकी का वध कर डाले... देवकी की आठवीं संतान के जन्म से पहले देवकी का वध!... तो फिर वह भविष्यवाणी झूठी हो जाएगी। कंस की मृत्यु अदृश्य हो जाएगी। कौन खोजेगा, उस मृत्यु को?

''मैं तुम्हें मारने नहीं आया देवकी।'' कंस ने निर्भीक दिखने का नाटक किया, ''मेरी तुमसे कोई शत्रुता नहीं है। मैं केवल अपनी मृत्यु का शत्रु हूँ। उसी को खोज रहा हूँ।''

''अपने जीवन में तो अपनी मृत्यु को कोई नहीं खोज पाया'', देवकी का मधुर कोमल स्वर लौट आया था, ''और मरने के बाद अपनी मृत्यु को खोजना नहीं पड़ता। इसलिए मृत्यु को मत खोजो, वही तुम्हें खोज लेगी। जिसका जो काम है, उसे करने दो।... और मृत्यु को खोजने कहाँ जाना है, वह तो तुम्हारे इसी शरीर के भीतर है। तुम्हारे इस शरीर के जन्म के साथ ही उसका भी जन्म हुआ था। तुम आज तक उसकी अनदेखी करते आए हो। किंतु उसकी दृष्टि एक क्षण के लिए भी तुमसे नहीं हटी है। वह तुम्हें देख रही है।...''

''महाराज! महाराज!'' प्रलंब ने कंस को झकझोरा, ''यह स्त्री आपको पागल कर देगी। इसकी बातें मत सुनिए। या तो इसका वध करने का आदेश दीजिए या फिर यहाँ से चलिए।''

''जाओ कंस जाओ'', देवकी हँस पड़ी, ''अपने बचे-खुचे दो-चार दिन अपने ढंग से जी लो। आकंठ मदिरा पी लो; और मदिरा पीते-पीते ही मर जाओ।... जाओ, मरने से पहले अपनी पत्नियों को उन स्त्रियों के नाम बता दो, जिनका तुमने आखेट किया है। जाओ, अपने पुत्रों को बताओ कि वृद्धावस्था में अपने पिता को कैसे बंदी किया जाता है। किंतु तुम्हारी तो वृद्धावस्था आनेवाली ही नहीं है। वृद्धावस्था से पहले तो तुम्हारी मृत्यु ही तुम्हें आ दबोचेगी...।''

प्रद्योत और प्रलंब दोनों ही देख रहे थे कि कंस की ऊर्जा क्षीण होती जा रही है। न वह देवकी की बातों का कोई उत्तर दे पा रहा है और न उसके हाथ-पैर बाँधकर उसके मुँह पर पट्टी बाँधने के लिए कह रहा है; न ही उसके वध का आदेश दे रहा है। वह देवकी की वाणी से पराजित होता जा रहा था।

चलें महाराज! अब चले यहाँ से प्रलंब ने कंस की भुजा पकड़ कर उसे बाहर की ओर घसीटा।

कंस ने जैसे स्वयं को उसके सहारे ही छोड़ दिया था। दूसरी ओर से प्रद्योत ने पकड़ा... वे दोनों उसे बाहर ले चले, जैसे किसी असहाय रोगी को कोई ले जाता है; किंतु तभी कंस सजग हो गया।... उसके सैनिक, आदमी उसे इस अवस्था में देखकर क्या सोचेंगे! उसने अपनी भुजाएं छुड़ा लीं और जैसे अपने पैरों पर खड़ा हो गया।

''वसुदेव! बहुत शीघ्र तुम कंस के क्रोध का सामना करोगे'', उसने दाँत पीसकर कहा।

वसुदेव बंद होते हुए सीखचों के पास आ गए और मुस्कराकर बोले, ''और आज तक मैं किसके क्रोध का सामना कर रहा हूँ ?''

किंतु कंस दूर जा चुका था, उसने या तो वसुदेव का स्वर सुना नहीं या न सुनने का अभिनय किया। वसुदेव शांत थे; किंतु कहे बिना नहीं रह सके, ''और तुम बहुत शीघ्र महाविष्णु के क्रोध का सामना करोगे।''

देवकी मुस्कराईं, ''यदि महाविष्णु भी क्रोध करने लगे, तो उनमें और साधारण मनुष्य में अंतर ही क्या रह जाएगा?''

''क्रोध का नहीं, तो न्याय का सामना तो करना पड़ेगा।''

''न क्रोध न न्याय! वे तो केवल करुणा ही करते हैं'', देवकी का मन कह रहा था, ''किंतु कंस को अपने कर्मों का फल तो भुगतना ही होगा।''

कंस को सारी रात नींद नहीं आई।

क्या सत्य ही देवकी के गर्भ में कोई अलौकिक संतान आ गई है ? नहीं तो देवकी इतनी बदल कैसे गई ? वह कंस से डरती नहीं। वह अपनी मृत्यु से भयभीत नहीं है। अपनी संतान के वध की संभावना से प्रताड़ित नहीं है। कौन उसे इतना निर्भीक बना रहा है ?... और महावीर कंस, आत्मविश्वासी कंस, सर्वशक्तिमान कंस की टाँगे क्यों काँपने लगी थीं ?...

कंस तब गालव ऋषि के आश्रम का ब्रह्मचारी था। ऋषि ने बताया था कि 'सत्व' की वृद्धि होने पर रजोगुण और तमोगुण की शक्ति क्षीण होने लगती है।... कदाचित् उसी संदर्भ में उन्होंने कहा था कि मनुष्य का हृदय सत्व से आपूर्त हो जाए तो उसमें ईश्वर प्रकट होता है।... क्या गालव ऋषि ऐसी ही किसी स्थिति का वर्णन कर रहे थे। देवकी के हृदय

में सत्व की वृद्धि हो गई है, इसलिए उसमें ईश्वर प्रकट हो गया है या ईश्वर अथवा उसका कोई प्रतिनिधि संतान के रूप में देवकी के गर्भ में आ गया है, इसलिए देवकी इतनी निर्भीक हो गई है।..... पर कंस किसी ईश्वर को नहीं मानता। ईश्वर तो केवल भयभीत हृदय की कल्पना है, उसकी बाध्यता है।..... गालव ऋषि की बातें कंस को न तब स्वीकार्य थीं, न अब स्वीकार्य हैं। तब भी उसने अपने मित्रों–भौंम और बाण–से उनकी चर्चा की थी और उन्हें हास्यास्पद पाया था। आज भी उसे ये चर्चाएँ उतनी ही हास्यास्पद लगती हैं। किंतु देवकी ? देवकी ऐसी कैसे हो गई – इसका उत्तर कौन देगा? और जब तक कंस को उसके इन प्रश्नों का उत्तर नहीं मिलेगा, वह सो कैसे पाएगा, उसे निद्रा कैसे आएगी?

वह मथुरा के राजप्रसाद में, अपने शयन–कक्ष में, इस कोमल पर्यंक पर करवटें बदल रहा है; और उधर वसुदेव और देवकी उस कारागार में आनन्द की नींद सो रहे होंगे।.....

अभ्यास

1. देवकी कारागार में बैठी किस प्रकार के आनन्द का अनुभव कर रहीं थीं ?
2. कंस देवकी के ''व्योमातीत'' रूप से क्यों भयभीत था ?
3. देवकी की गोद में क्रीड़ा कौन कर रहा था ?
4. वसुदेव – देवकी संवाद को संक्षेप में लिखिए।
5. बाँसुरी की मीठी टेर सुनकर देवकी ने क्या अनुभव किया ?
6. ''माया का भ्रम हट जाए तो फिर आनन्द स्वयं ही उद्घाटित हो जाता है।'' वसुदेव के इस कथन का आशय स्पष्ट कीजिए।
7. देवकी ने कंस को किस प्रकार समझाया ?
8. कारागार से लौटने के पश्चात् कंस की मानसिकता वर्णन कीजिए।

योग्यता विस्तार

1. ''कृष्ण चरित्र एवं उनकी नीति वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी प्रासंगिक हैं।'' इस विषय पर वाद–विवाद का आयोजन कीजिए।
2. प्रस्तुत उपन्यास अंश का नाट्य रूपान्तर कर उसे मंच पर प्रस्तुत कीजिए।
3. दूरदर्शन से प्रसारित 'महाभारत' अथवा ऐसे ही कृष्ण से जुड़े धारावाहिकों में से किसी एक पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कीजिए।

❋ ❋ ❋

NATIONAL HEALTH MISSION
राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन

एकीकृत बाल विकास सेवाएं

सर्व शिक्षा अभियान
सब पढ़ें सब बढ़ें

सॉलिड बनो इंडिया

नेशनल आयरन प्लस इनिशिएटिव कार्यक्रम

आयरन फॉलिक एसिड की गोली खाली पेट कभी ना लें
एलबेन्डाजॉल की गोली चबाकर ही खाए

- 10 से 19 बर्ष के बालक एवं बालिकाओं को सप्ताह में एक बार आयरन फॉलिक एसिड की नीली गोली।
- शासकीय स्कूलों (कक्षा 6से कक्षा 12 तक के छात्र एवं छात्राओं हेतु) एवं आंगनवाड़ी केन्द्रों में (शाला अप्रवेशी बच्चों हेतु) निःशुल्क उपलब्ध।
- शिक्षक/आंगनवांड़ी कार्यकर्ता की निगरानी में खिलायी जाने वाली सुरक्षित दवा।
- नेशनल डिवार्मिंग डे पर आंतों के कीड़े की रोकथाम हेतु एलबेन्डाजॉल की गोली की प्रदायगी।

हर मंगलवार नीली आयरन फॉलिक एसिड की गोली लेकर
"हम बनें सुस्त से चुस्त"

लाडो अभियान

"बच्चों का भविष्य दांव पर न लगाए, उन्हें पढ़ने आगे बढ़ने का मौका दें"

"18 वर्ष से कम उम्र की बालिका व 21 वर्ष से कम उम्र के बालक का विवाह, कानूनन अपराध है। ऐसे विवाह में शामिल सभी व्यक्ति अपराधी की श्रेणी में आते है चाहे वह जनसामान्य हो, या विवाह में सेवा देने वाले सेवा प्रदाता, बाल विवाह में उपस्थित व सम्मिलित होने पर 2 वर्ष का कठोर कारावास या ₹ 1,00000-/ (एक लाख) का जुर्माना या दोनों हो सकते हैं।

बाल विवाह की सूचना जिला कलेक्टर, आंगनवाड़ी केन्द्र, शिक्षक, पुलिस थाना, चाईल्ड लाईन 1098, हेल्प लाईन 1090, पत्रकार, पंच, सरपंच आदि को देकर बच्चों के भविष्य को सुरक्षित कर सकते है"

समग्र स्वच्छता अभियान संदेश

1. खाना खाने के पहले हाथ धोएँ।
2. शौच के बाद साबुन से हाथों को अवश्य धोएँ।
3. शौच के लिए शौचालय में ही जाएँ।
4. घड़े में से पानी डंडी वाले लोटे से ही निकालें, पानी में उंगलियाँ नहीं डुबाना चाहिए।